साज़-नासाज़

मनोज रूपड़ा

उस शाम मैं नरीमन प्वाइँट की उस फैंस पर लेटा था, जो कई किलोमीटर लंबी है और समुद्र तथा शहर को अपनी-अपनी सीमा को अहसास करवाती है। उस फैंस पर मेरे अलावा मेरे-जैसे कई और लोग भी बैठे थे। उनमें से कुछ लोग शहर की तरफ पीठ फेरकर बैठे थे और कुछ समुद्र की ओर, लेकिन मैंने दोनों पहलुओं पर टाँगें फैला रखी थीं और पीठ के बल लेटकर आसमान को देख रहा था। मेरी दाईं ओर समुद्री लहरों के थपेड़े थे और बाईं तरफ तेज़ रफ्तार से बहती मुम्बई।

मैं समुद्र और शहर से तटस्थ होकर मानसून के बादलों की धींगा-मस्ती देख रहा था और सोच रहा था कि काश, इस शहर में मेरा भी कोई दोस्त होता! मुम्बई आने से पहले मैंने अपने शहर में दोस्ती-यारी की एक बहुत जीवंत और सक्रिय हिस्सेदारीवाली जिंदगी गुज़ारी थी, और यहाँ-जिस्मों की इतनी लथपथ नजदीकियत के बावजूद कोई भी चीज़ मुझे छू नहीं पा रही थी।

मैं जब महानगरीय जीवन-शैली और अपनी कस्बाई जिंदगी के बीच कोई संतुलन बनाने की कोशिश कर रहा था, तभी मुझे सेक्सोफोन की आवाज़ सुनाई दी। सेक्सोफोन शुरू से मेरा सबसे प्रिय वाद्य रहा है। रेडियो या रिकॉर्डों पर सेक्सोफोन की धुनें सुनते हुए मुझे जिस भरे-पूरे आनंद का अहसास होता है, उसकी तुलना किसी भी तरह हार्दिक और शारीरिक मेल-मिलाप से की जा सकती है।

मैं तुरंत उठ बैठा जैसे मुझे दोस्त ने पुकारा हो। मैंने गर्दन फेरकर पीछे देखा। मुझसे थोड़ी दूर एक बूढ़ा सेक्सोफोनिस्ट समुद्र और डूबते सूरज को एक करुण धुन सुना रहा था। उसके कंधे पर एक चितकबरा कबूतर बैठा था। उसकी सफेद दाढ़ी और लंबे बालों की एक लटकती हुई लट पर सूरज की अंतिम सुनहरी किरणें पड़ रही थीं। उसके साज़ का गोल किनारा भी एक सुनहरे तारे की तरह टिमटिमा रहा था। यह दृश्य इतना सिनेमैटिक था कि मैं उसे देखता ही रह गया।

जो धुन वह बजा रहा था वह कुछ जानी-पहचानी-सी लग। स्मृति पर ज़ोर देने पर याद आया, वह पेटेटेक्स की धुन 'ब्लू सी एंड डार्क क्लाउड' बजा रहा था। पहले मुझे लगा यह बूढ़ा कोई विदेशी है, क्योंकि किसी देशी के हाथ और फेफड़े पर शहनाई और बाँसुरी के मामले में तो भरोसा किया जा सकता है, पर सेक्सोफोन पर ऐसी धुन तो कभी एक शक्तिशाली लहर की तरह उठती है और पत्थरों से पछाड़ खाकर दूधिया फेन में तब्दील हो जाती है, तो कभी बादलों की तरह घुमड़कर बरस पड़ती है; कोई भी भारतीय इतने साफ ढंग से बजा सकता है - इसमें मुझे संदेह था। यह सिर्फ बिटनिक लोगों के उन्मत्त और उद्दाम फेफड़ों के बूते की बात थी, जो किसी घराने के शास्त्रीय नियमों के दास नहीं होते।

मैं ज़रा और पास गया और मैंने देखा-उस बूढ़े के कपड़े और उसका शरीर खुद अपने प्रति की गई बेहरम लापरवाही से ग्रस्त और त्रस्त थे। उसकी हालत मानसिक रूप से विक्षिप्त किसी ऐसे लावारिस आदमी जैसी थी जो महीनों से नहाया न हो, जिसके सिर और दाढ़ी के बेतरतीब बाल आपस में चिपककर जटाओं में बदल जाते हैं, जिसके शरीर पर मैल की मोटी पर्तें जम जाती हैं और कपड़े इतने चिक्कट हो जाते हैं कि उसका असली रंग तक पहचान में नहीं आता।

मेरे अलावा अब कुछ और लोग भी वहाँ जमा हो गए। चूँकि वह कोई लोकप्रिय फिल्मी धुन नहीं बजा रहा था, इसलिए लोगों की दिलचस्पियाँ दूसरे

आकर्षणों की तरफ फिसल गईं। लोगों के आने-जाने और पल-दो-पल के लिए ठिठककर खड़े होने का यह क्रम काफी देर तक चलता रहा।

कुछ देर बाद हवा अचानक सपाटे से चलने लगी। फिर वह सपाटेदार हवा एक तूफान में बदल गई। उधर आसमान में मानसूनी बादलों का काला दल तेज़ी से आगे बढ़ा और इससे पहले कि कोई कुछ सोच पाता, मौसम की पहली बारिश ने मुम्बई के चेहरे पर एक तमाचा जड़ दिया। मैंने इतनी अचानक आक्रामक बारिश पहले कभी नहीं देखी थी, सिर्फ सुना था कि मुम्बई में बरसात किसी को माफ नहीं करती।

अगले ही पल लोग इधर-उधर भागने लगे, जैसे अचानक लाठी-चार्ज शुरू हो गया हो। मैं लोगों ही हड़बड़ाहट में शामिल नहीं हुआ, क्योंकि वहाँ दूर-दूर तक न कोई शेड था, न सुरक्षित ठिकाना। इसलिए न तो भागने का कोई अर्थ था, न भीगने से बचने का कोई उपाय।

हवा और पानी के इस घमासान से हर चीज़ अस्त-व्यस्त हो गई, लेकिन वह बूढ़ा अभी तक उसी तन्मयता से सेक्सोफोन बजा रहा था। मौसम के इस बदले हुए मिज़ाज का उस पर कोई असर नहीं हुआ, सिर्फ धुन बदल गई। पहले वहाँ साहिल को सहलानेवाली छोटी-छोटी लहरें थीं, पर अब उसके फेफड़ों से अंधड़ उठ रहे थे, जैसे वह बाहर के तूफान का समाना अंदर के तूफान से कर रहा हो। जैसे-जैसे बारिश रौद्र रूप धारण कर रही थी, हवाएँ दहाड़ती हुई अपने चक्रवाती घेरे का विस्तार कर रही थीं और समुद की लहरें अपनी पूरी ऊँचाई, गति और ताकत से साथ नरीमन प्वाइंट से उस पथरीले किनारे को ध्वस्त कर देने के लिए बिफर रही थीं, वैसे-वैसे उस बूढ़े की धमनियों से उसकी निरंकुश और प्रतिघाती भावनाएँ खून को खौलाती हुई बाहर आ रही थीं। मुझे लगा, अगर यह तूफान कुछ देर और नहीं थमा, तो यहाँ खून-खराबे की नौबत आ सकती है।

और हुआ भी वही। हवा के एक तेज़ झपाटे के साथ एक बहुत ऊँची और

ख़ार खाई हुई लहर आई और पथरीले किनारे को रौंदती हुई सड़क पर चढ़ गई-पूरे मेरिन ड्राइव पर समुद्री पानी का झाग ददोरे की तरफ फैल गया। जब लहर वापस लौटी, तब मैंने देखा- वह बूढ़ा लहर की पछाड़ खाकर सड़क पर लुढ़क गया था। मैं तुरंत उसकी तरफ लपका। मैंने उसे उठाना चाहा, मगर उसका शरीर इतना श्लथ हो गया था कि उठाते नहीं बना।

और तब मैं भी वहीं सड़क पर बैठ गया। मैंने अपनी जांघ पर उसका शरीर खींच लिया। वह बहुत बुरी तरह हाँफ रहा था। मैंने उसके लंबे छितराए हुए बालों को उसके चेहरे से हटाया और ग़ौर से उसके चेहरे को देखा। वहाँ मुझे कुछ और नहीं, सिर्फ सूजन दिखाई दी- एक ऐसी सूजन, जो उन लोगों के चेहरों पर तब दिखाई देनी शुरू होती है जब वे अपने हर दुख और पीड़ा का इलाज शराब से करने लगते हैं।

मैं कुछ देर यूँ ही बैठा रहा। मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा था। उसकी साँसें अभी तक तेज़ थीं और हर साँस के साथ शराब के भभाके उठ रहे थे। मैंने उसके गाल को थपथपाया। उसने आँखें नहीं खोलीं। मैंने उसके कंधे झँझोड़े, मगर कोई बात नहीं बनी। मैं यह सोचकर घबरा उठा कि कहीं वह मेरी बाहों में दम न तोड़ दे। मैंने इधर-उधर नज़रें दौड़ाईं। सड़क-छाप लोगों को पनाह मिलना मुश्किल था और सड़क पर टैक्सियों और कारों का कारवाँ इतनी तेज़ी से गुज़र रहा था कि मैं तो क्या, कोई ज़लज़ला भी उसे रोक नहीं सकता था।

मेरे पीछे समुद्र अभी तक पछाड़ें खा रहा था और ऊपर आसमान में बादलों की एक और टुकड़ी किसी बड़े आक्रमण की तैयारी के साथ आगे बढ़ रही थी, मगर मैं उस बूढ़े को बाहों में लिये चुपचाप बैठा रहा। मैंने एक बार फिर उसके चेहरे पर नज़र डाली और मुझे लगा यह चेहरा जवानी में बहुत सुंदर रहा होगा। उम्र, कठिन हालात और खराब आदतों ने हालाँकि उसके चेहरे का सौंदर्य छीन लिया था, लेकिन फिर भी वह अर्थपूर्ण था और अभी सृजनात्मकता से रिक्त नहीं हुआ था।

चार-पाँच मिनट की बेहोशी के बाद उसने आँखें खोलीं। कुछ देर तक झिपझिपाने के बाद उसकी आँखें मेरे चेहरे पर स्थिर हो गईं। उसकी पलकें खूब भारी थीं और आँखों के अन्दर मरण और क्षरण से लिपटी एक काली और अशुभ छाया साफ दिखाई दे रही थी। मेरे चेहरे पर के मित्र-भाव ने उसे राहत दी होगी, तभी तो वह मंद-मंद मुस्काया और अपना हाथ मेरे कंधे पर रखकर उठ बैठा। कुछ ही देर में वह इस तरह बातें करने लगा जैसे कुछ हुआ ही न हो। मुझे उम्मीद नहीं थी कि वह यूँ चुटकियों में सहज और सजग हो जाएगा।

आमतौर पर पहली मुलाकातों में लोग 'क्या करते हो?', 'कहाँ रहते हो?' या 'कहाँ के रहनेवाले हो?' जैसे औपचारिक सवाल करते हैं, लेकिन उसने कुछ अजीब सवाल लिए -"तुम्हें बारिश में भीगना अच्छा लगता है?"

-"तुम हवा से बात कर सकते हो?"

-"क्या तुम्हें शराब पीने के बाद अपने भीतर एक दुखभरी खुशी महसूस होती है?"

मैंने इन तमाम सवालों का जवाब 'हाँ' में दिया तो वह खुश हो गया।

"तब तो तुम्हें संगीत से भी लगाव होगा, है न?"

"हाँ।" मैंने कहा, "खासतौर से सेक्सोफोन मुझे बेहद पंसद है।"

"अरे वाह! तब तो अपनी खूब जमेगी।" उसने बड़ी गर्मजोशी से अपना दायाँ हाथ ऊपर उठाया और मेरी हथेली से टकराकर एक पुरज़ोर ताली बजाई।

"आप बहुत अच्छा बजाते हैं। भारत में भी इतने परफेक्ट सेक्सोफोन प्लेयर हैं यह मुझे मालूम नहीं था।"

अपनी तारीफ सुनकर खुश होने के बजाय उसने कड़वा-सा -मुंह बनाया और मेरी तरफ से ध्यान हटाकर गरजते-लरज़ते समुद्र को देखने लगा। बारिश की तेज़-रफ्तार बूँदें समुद्र के ठोस पानी से टकराकर धुआँ-धुआँ हो रही थीं।

उस धुँधुवाते पानी को वह कुछ देर तक यूँ ही देखता रहा। फिर कुछ सोचकर अचानक मेरी तरह मुँह फेरा, "सुनो, तुम्हारे पास कुछ रूपए हैं?"

मैं उसके इस अप्रत्याशित सवाल से ज़रा चौंका। अपनी जेब में हाथ डालते हुए मैंने सोचा-कहीं यह कोई मंतरबाज़ तो नहीं है? लेकिन जब मैंने देखा कि पैसा माँगते हुए उसके चेहरे पर किसी भी तरह की हीनता का बोध, कोई शर्म, झेंप या लालच नहीं है तो मैं थोड़ा आश्वस्त हुआ। मैंने जेब से पर्स निकालकर पूछा, "कितने रूपए चाहिएँ?" उसने मेरे हाथ से पर्स ले लिया- उतनी ही सहजता से, जैसे मेरे पुराने दोस्त मेरे हाथ से सिगरेट का पैकेट ले लेते थे। उसने पर्स खोलकर सौ-सौ के चार-पाँच नोट निकाल लिये और पर्स मेरे हाथ में थमाकर बिना कुछ कहे जाने लगा।

"सुनो....!" मैं उसके पीछे लपका।

उसने मुड़कर मुझे देखा।

"अगर जरूरत है तो और ले लो।" मैंने पर्स की तरफ इशारा करते हुए कहा, "लेकिन एक शर्त है - आज की शाम... और हो सके तो रात भी तुम्हें मेरे साथ गुज़ारनी पड़ेगी।"

"मैं कोई रंडी नहीं हूँ।"

उसने ये शब्द इतने कड़क लहजे में कह कि मैं सकपका गया। मैंने कहा, "नहीं -नहीं, दरअसल इस शहर में मेरा कोई दोस्त नहीं है। मैं तुम्हारे साथ थोड़ा वक्त गुज़ारना चाहता हूँ।"

"मेरी दोस्ती इतनी सस्ती नहीं है। बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी।"

"मैं कोई सौदा नहीं कर रहा हूँ। सिर्फ तुम्हारे साथ थोड़ा वक्त गुज़ारना चाहता हूँ।"

"क्यों? सिर्फ मेरे साथ क्यों?"

"इसलिए कि शराब पीने के बाद मुझे अपने भीतर एक दुखभरी खुशी

महसूस होती है। मुझे बारिश मे भीगना अच्छा लगता है, मैं हवा से बातें कर सकता हूँ, मुझे संगीत से प्यार है और खासतौर से पेटेटेक्स का मैं मुरीद हूँ।"

इस बार उसके ज़रा आश्चर्य से मुझे देखा। फिर मेरे कंधे पर हाथ रखकर मुस्काया और मेरे गले मे गलबहियाँ डालकर चलने लगा। उसने पूछा, "तुम पेटेटेक्स को कब से जानते हो?"

"पाँच साल पहले मैंने रिकॉर्ड पर वह धुन सुनी थी, जिसे कुछ देर पहले तुम बजा रहे थे।"

"नहीं, मैं उस धुन को नहीं बजा रहा था।" उसने तुरंत मेरी बात का खंडन किया, "वह धुन ही मुझे बजा रही थी।"

"मैं समझा नहीं?"

"तुम समझोगे भी नहीं। इस बात को समझने में वक्त लगता है।"

उसके इस बुजुर्गाना लहजे से मुझे थोड़ी कोफ्त हुई। फिर मुझे लगा-भले ही वह मेरे गले में हाथ डालकर चल रहा है, लेकिन आखिरकार वह उम्र में मुझसे दोगुना बड़ा है, इसलिए उसके इस रवैये से मुझे कोई आश्चर्य या आपत्ति नहीं होनी चाहिए। मैंने चलते-चलते यूँ ही पूछ लिया, "आपने सेक्सोफोन बजाना कब से शुरू किया?"

"पच्चीस साल पहले गोवा में एक हिप्पी ने मुझे इस मीठे ज़हर का स्वाद चखाया था। फिर धीरे-धीरे मुझे इसकी लत लग गई।"

"क्या तुमने सारी ज़िंदगी इसी नशे में गुजार दी?"

"नहीं, पहले मैं थोड़ा होश में रहता था और तब मैं सेक्सोफोन के साथ वही सलूक करता था जो एक बदमिज़ाज घुड़सवार अपने घोड़े के साथ करता है। लेकिन जब से मैं नशे में रहने लगा हूँ तब से यह मेरे ऊपर सवार हो गया है। तुम शायद नहीं जानते-बदला लेने के मामले में इसके जितना शातिर और माहिर दूसरा कोई साज़ नहीं है। अभी कुछ ही देर पहले तुमने देखा होगा, वह

मुझे कितनी बुरी तरह बजा रहा था। अगर समुद्र की ऊँची लहर ने मुझे उससे छुड़ाया न होता तो आज वह मेरी जान ही ले लेता।"

"फिर तुम इस ज़हरीले नाग को हमेशा अपने साथ क्यों रखते हो?"

उसने सेक्सोफोन को बहुत अजीब नज़रों से देखा, फिर मुसकराने लगा, "कहानी ज़रा उलझी हुई है। चलो कहीं बैठकर बात करते हैं।"

उसने मेरा हाथ अपने हाथ में थाम लिया। पटरी पर पैदल चलनेवालों में केवल हमीं दो थे जो पानी से लिथड़ी हवा और हवा से लिपटे पानी से संसर्ग से रोमांचित हो रहे थे। उस गीली हवा ने अचानक हमारे भीतर प्यास जगा दी-एक ऐसी कुड़कुड़ाती प्यास, जो सिर्फ शराब से बुझाई जा सकती थी।

बूढ़े के हाथ की पकड़ अचानक मज़बूत हो गई। सड़क क्रॉस करने के लिए वह आगे बढ़ा और समुद्र-किनारे की पटरी को छोड़कर सामने उस पटरी पर चढ़ गया जो मचलते हुए शहर की हलचलों के किनारे-किनारे काफी दूर तक फैली थी।

कुछ ही देर बाद दोनों एक बीयर बार के सामने खड़े थे। दरवाज़े पर खड़े दरबान ने तपाक से सलाम बजाकर दरवाजा खोलने के बजाय ज़रा झिझकते हुए परेशान निगाहों से हमारे गीले लबादों को देखा, खासतौर से बूढ़े के कीचड़ से सने फचफचाते जूतों और चिक्कट कपड़ों ने उसकी नाक-भौंह को सिकुड़ने के लिए मजबूर कर दिया, मगर चूँकि हम ग्राहक थे, कोई भिखारी नहीं, इसलिए मजबूरन उसे दरवाज़ा खोलना पड़ा।

हम अंदर दाखिल हुए और फर्श पर बिछे खूबसूरत कालीन पर बिना कोई तरस खाए अपने जूतों के बदनुमा धब्बे पीछे छोड़ते हुए हॉल के बीचोबीच पहुँच गए। हम जैसे ही कुर्सी पर बैठे, एक बहुत सजी-धजी लड़की हमारे पास आई। उसने पेशेवर मुस्कराहट के साथ मुझसे हाथ मिलाया और बूढ़े के नज़दीक बैठकर उसकी गर्दन में अपनी बाँह डाल दी।

"हलो भाऊ अंकल! कहाँ थे इतने दिन? हमको भूल गए क्या?"

"मस्का मत मार!" बूढ़े ने अपनी गर्दन से उसका हाथ हटा दिया, "जा जल्दी रम लेकर आ।"

वह थोड़ी बनावटी नाराज़गी ज़ाहिर करती हुई उठकर जाने लगी। फिर अचानक एक खास अदा से अपने बाल पीछे की ओर झटकते हुए मुझसे मुखातिब हुई, "क्या आप भी रम लेंगे?"

मैंने 'हाँ' में गर्दन हिला दी। उसने एकाबारगी बहुत गहरी निगाहों से मुझे देखा, जैसे मुझे पूरे-का-पूरा एक ही बार में निगल लेना चाहती हो। मैंने नज़रें झुका लीं।

शराब के आने का इंतज़ार करना बूढ़े ने ज़रूरी नहीं समझा। वह बिना किसी भूमिका के अपनी कहानी बताने लगा। उसके लहजे, बोलने के लिए चुने हुए शब्दों और अभिव्यक्ति में कोई तारतम्य नहीं था। एक सिलसिलेवार तरतीब से बोलते-बताने के बजाय वह यहाँ-वहाँ और जहाँ-तहाँ से टुकड़े बटोर रहा था। सेक्सोफोन के बारे में बोलते-बोलते अचानक वह बार में काम करनेवाली लड़कियों के बारे मे बोलने लगा। लड़कियों को फटकारने-पुचकारने के बाद उसने शराबनोशी पर अपना संक्षिप्त, मगर सारगर्भित व्याख्यान समाप्त होते ही वह अचानक एक कब्रिस्तान में घुस गया। अपने एक दोस्त की कब्र के सामने थोड़ी देर चुपचाप खड़े रहने के बाद वह लगभग भागते हुए बाहर निकला और फिर हाथ पकड़कर मुझे अपने पीछे खींचते हुए दादर की एक चाल में ले गया, जहाँ बीस-पच्चीस साल पहले वह अपने कुछ साज़िंदे साथियों के साथ रहता था। वे सब फिल्मों के लिए बैकग्राउँड म्यूज़िक कंपोज़ करते थे उस वक्त की बेहतरीन आमदनी को बदतरीन ढंग से खर्च करते थे।

एक घंटे की बातचीत के बाद कुल मिलाकर जो ग्राफ बना, वह कई तरह के उतार-चढ़ाववाला ग्राफ था। उस पर और उसके तमाम साथियों पर

कोई-न-कोई धुन सवार थी। वे उस तरह के धुनी लोग थे जो न तो दुनिया का कोई लिहाज़ करते हैं, न अपने-आपको कोई रियायत देते हैं; वे अपने लिए कोई संकीर्ण सीमा निर्धारित नहीं करते। उनमें कोई एक केंद्रीय भाव या विशेष गुण नहीं होता। वे गुणों और दुर्गुणों के बीच के फर्क को मिटाते हुए अपनी एक अलग और अजीब-सी हालत बना लेते हैं।

उसके उस दौर के लगभग सभी साथी संगीत और ख़ब्त के शिकार थे। उनमें से कुछ जो समझदार थे, बाद में फिल्मों में संगीत-निर्देशक या ए ग्रेड के आर्टिस्ट बन गए। बाकी सब वहीं-के वहीं रहे; लेकिन उन दिनों काम लगातार मिलता था और आमदनी अच्छी होने को करण वे नए आकर्षणों और ललचानेवाले कामुक और सजीले बाज़ार के सामने अपने-आपको खर्च करने से नहीं रोक पाए। वे सब शराबी थे, जुआरी थे, वेश्यागामी और उधारखोर थे, मगर शुरू से आखिर तक कलाकार थे। यही वे साज़िंदे थे, जिन्होंने भारतीय फिल्म संगीत को परवान चढ़ाया था। इसी पीढ़ी ने आज़ादी के बाद के भारतीय 'मन' की गहराइयाँ-ऊँचाइयाँ नापी थीं। इन्हीं बेसुरे पियक्कड़ों ने भावनाओं के सभी तार छेड़कर और साँस के साथ साँस मिलाकर अपने युग की धड़कनों को लय दी थी।

डेढ़-दो घंटे बाद जब हम बार से बाहर निकले तब आसमान में बादलों के बीच फिर कानाफूसी चल रही थी, लेंकिन चूँकि हम पहले ही एक बड़े आँधी-तूफान का सामना कर चुके थे और सिर्फ बाहर से ही नहीं, भीतर से भीग चुके थे, इसलिए अब किसी भी तरह के गीलेपन से हमें गुरेज़ नहीं था।

मेरा बूढ़ा दोस्त शराब के तीन प्यालों के बाद ज़रा कड़क हो गया था। उसने अपनी पीठ सीधी कर ली और सीना तानकर इतने गर्व से चलने लगा जैसे पूरे मुम्बई का मालिक हो। उसके इस मालिकाना रवैये में दारू पीकर भड़ास निकालनेवाले किसी कमज़ोर और कायर आदमी की झूठी अकड़ नहीं, बल्कि एक मौलिक विरोध पर आधारित आक्रामकता थी।

हम दोनों चलते जा रहे थे बिना यह तय किए कि जाना कहाँ है। न उसे कहीं पहुँचने की जल्दी थी, न मुझे। हमारी उद्देश्यहीनता इस शहर की उद्देश्यपरक व्यवस्तताओं के साथ टक्करें ले रही थी। फुटपाथ पर वी.टी. की तरफ जानेवालों की एक तेज़ रफ्तार भीड़ में हम दोनों किसी गीले लबादे की तरह उलझ गए थे। भीड़ की चुस्ती और फुर्ती के बरअक्स हमारा ढीलापन सिर्फ थकान या नशे की वजह से नहीं था, बल्कि यह एक प्रतिक्रिया थी। मुझे अब यह पक्का भरोसा हो गया कि मेरा यह बूढ़ा दोस्त भी उस चुस्त-दुरूस्त और फटाफट कामयाबी के खिलाफ है जो मनुष्य से उसका निर्दोष आनंद छीन लेती है।

मैंने चलते-चलते उसके चेहरे पर निगाह डाली। वह मदमस्त था। उसकी चाल में बदलाव आ गया था। चलते-चलते वह एक दुकान के सामने अचानक रूक गया। दुकान के अगले हिस्से में एक बड़ा शो-केस था जिसमें तरह-तरह के वाद्य-यंत्र रखे गए थे। उनके बीच एक बहुत बड़ा इलेक्ट्रॉनिक की-बोर्ड पड़ा था। वह बूढ़ा उस की-बोर्ड को बड़े ग़ौर से देखने लगा। मैंने सोचा-शायद उसमें कोई ग़ौर करने लायक विशेषता होगी, पर मैंने देखा - बूढ़े के चेहरे पर अचानक एक बड़ी लहर आई और एक ही पल में उसका मिज़ाज बदल गया। वह उस वाद्य की तरफ कुछ ऐसे अंदाज में देख रहा था मानो वह कोई उपकरण नहीं, बल्कि एक जीता-जागता शत्रु हो। एक खतरनाक तनाव और तीखी घृणा से उसका चेहरा कँपकँपाने लगा।

"तुम इसे जानते हो?" उसने की-बोर्ड की तरफ इशारा करते हुए मुझसे पूछा।

"हाँ।" मैंने कुछ सोचते हुए कहा, "यह एक जापानी सिंथेसाइजर है।"

"नहीं," उसने ऊँची आवाज़ में कहा, "यह एक तानाशाह है! हत्यारा है! इसी की वजह से दास बाबू और फ्रांसिस की जान गई... यही हम सबकी बदहाली का एकमात्र ज़िम्मेदारी है।"

मैंने बहुत आश्चर्य से शो-केस की तरफ देखा। उस कई पुश-बटनों और प्यानो जैसी चाबियोंवाले वाद्य में मुझे कोई ऐसी खतरनाक खासियत नज़र नहीं आई।

शो-केस से नज़रें फेरकर जब मैंने बूढ़े की तरफ देखा, तो मुझे अपने चेहरे पर एक अजीब-सी ऐंठन नज़र आई। उसका शरीर कुछ इस तरह काँप रहा था मानो उसे तेज़ बुखार हो। उसकी इस अस्वाभाविक उत्तेजना से मुझे बेचैनी महसूस हुई। मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा और उसे फुसलाते हुए आगे ले चलने की कोशिश की। पहले तो वह टस-से-मस नहीं हुआ, लेकिन फिर जैसे कोई दौरा पड़ गया हो, उसने लपककर फुटपाथ से एक ईंट का अद्धा उठा लिया। मैंने तुरंत उसका हाथ पकड़ लिया और बड़ी मुश्किल से उसे काँच फोड़ने से रोका। मेरे इस हस्तक्षेप से वह और भी बिफर गया। उसने मुझे एक तरफ झटक दिया और फुटपाथ की भीड़ को बहुत वाहियात तरीके से धकेलते हुए आगे बढ़ा। उसके मुँह से अनर्गल वाक्यों और गालियों की बौछार लग गई। उसके अंदर उठे इस चक्रवर्ती तूफान के रूख और गति का अनुमान लगाना मुश्किल था। सिर्फ इतना साफ समझ में आ रहा था कि उस चक्रवाती घेरे के केंद्र में वही इलेक्ट्रॉनिक इंस्ट्रूमेंट था जिसे वह भी नकलचोर कहता था तो कभी हरामखोर।

फिर वह उन संगीत-कपंनियों को गालियाँ देने लगा जिन्होंने ऐसे नकली वाद्यों और साउँड रिकार्डिंग की नई और चालाक तकनीकों के सहारे भोंडे फिल्मी गीतों के ऑडियो कैसेट का होलसेल मार्केट फैला रखा था। बाद में वह उन लोगों को भी कोसने लगा जिन्होने ऐसे वाद्यों का निर्माण किया था, जो दूसरे तमाम वाद्यों की हू-ब-हू नकल करने में सक्षम थे। बाज़ार में आते ही संगीत के ठेकदारों ने उसे तुरंत अपना लिया था और उन साज़िंदों को काम मिलना बंद हो गया जो अर्से से केवल इसी काम या हुनर या कला के सहारे जिंदगी बसर कर रहे थे।

"अब इन हरामज़ादों को आखिर कौन समझाने जाए? उनको तो सिर्फ अपना धंधा-फायदा नज़र आता है। कला और कलाकार जाएँ भाड़ में! किसे

खबर है कि पुराने साज़िंदे कहाँ हैं? किसे फिक्र है कि अगर वे बजाएँगे नहीं तो क्या करेंगे? जिस आदमी ने जिंदगी - भर वायलिन बजाई हो, क्या वह टमटम चला सकता है? क्या तबला बजानेवाले हाथ मसाज का काम कर सकते हैं? प्यानो पर थिरकनेवाली उँगलियों से अगर कसाई की दुकान में मुर्गियों की आँतें छँटवाई जाएँ तो कैसा लगेगा?"

वह पता नहीं किससे सवाल कर रहा था। थोड़ी ही देर में वह यह भी भूल गया कि मैं उसके साथ हूँ। मुझे उसके चेहरे पर पागलपन के चिन्ह साफ दिखाई दिए। वह अचानक फुटपाथ से उतरकर सड़क क्रॉस करने लगा। वहाँ न तो ज़ेब्रा क्रॉस था, न पैदल चलनेवालों के लिए कोई सिगनल। चालू ट्रैफिक में उसके यूँ अचानक घुस जाने से एक-साथ कई वाहनों का संतुलन बिगड़ गया। एक सिटी बस की चपेट में आने से वह बाल-बाल बचा, मगर उसे बचाने के चक्कर में एक टैक्सी मार्ग-विभाजक से टकरा गई और टैक्सी के अचानक रूकते ही पीछे तेज़ रफ्तार से आती कई कारें और टैक्सियाँ असंतुलित हो गईं। टैक्सियों और कारों के ड्राइवर गुस्से से फनफनाते हुए नीचे उतरे और बूढ़े को घेर लिया। ट्रैफिक हवलदार ने बूढ़े को जब उस घेरे से बाहर निकाला, तो मैंने देखा-उनकी नाक और जबड़े से खून बह रहा था। मगर वह खून पोंछने या घाव को सहलाने के बजाय चेतावनी-भरे शब्दों में पता नहीं किसे गालियाँ बक रहा था। हवलदार ने उसका कॉलर पकड़ा और घसीटते हुए उसे सड़क के दूसरे किनारे तक ले गया।

ट्रैफिक नियंत्रित होने में थोड़ा समय लगा। इस बीच मेरी नज़रें बराबर बूढ़े का पीछा करती रहीं। वह लड़खड़ाते हुए फुटपाथ पर चढ़ा और मेरे देखते-ही-देखते अगले सर्कल में दाईं तरफ मुड़ गया।

पैदल चलनेवालों के लिए जैसे ही ट्रैफिक खुला, मैं तेज़ी से उस सर्कल की तरफ भागा। सर्कल का मोड़ मुड़ने के बाद मैंने नज़रें दौड़ाई। उस लंबे-गीले रास्ते में छतरियों के झुंड के बीच उसका भीगता और भागता हुआ शरीर मुझे

दिखाई दिया। मैं बहुत मुश्किल से उसके करीब पहुँच पाया। मैंने झपटकर उसका कंधा पकड़ लिया। उसने मुड़कर मुझे देखा - उसके चेहरे पर घूँसों और थप्पड़ों के दाग उभर आए थे। नाक से भी अभी तक गाढ़ा लाल खून टपक रहा था और आँखों में अजीब-सी अजनबीयत-सी थी। चौराहे के एक रेड सिगनल की रौशनी में उसका भावहीन, पथराया-सा चेहरा मुझे भयानक लगा।

"तुम्हारा घर कहाँ है?" मैंने पूछा।

करीब से गुज़रते वाहनों के हॉर्न की वजह से शायद उसे मेरी बात समझ में नहीं आई।

"तुम्हारा घर कहाँ है?" मैंने इस बार उसके कान के पास अपना मुँह ले-जाकर पूछा। उसके चेहरे पर अब भी ठोस संवेदनहीनता छाई रही। तीसरी बार वही सवाल पूछने के बाद भी जब उसने उन्हीं भावशून्य आँखों से मुझे देखा तो मैं समझ गया कि बात हद से गुज़र गई है और अब शराब, खून और बारिश से भीगी हुई उसकी देह को अकेले भटकने के लिए छोड़ देने से बड़ा कोई गुनाह नहीं हो सकता।

मैं बहुत परेशान हो गया। समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ। वह अगर सिर्फ बीमार होता, तो भी मैं उसे सँभाल लेता, मगर मामला दिमाग का था और उसके पागलपन में अगर मुझे वह युक्तिसंगत व्यवस्था न दिखती, जिसे हम 'जिनियस' कहते हैं, तो शायद मैं उसे वहीं छोड़कर चला जाता, क्योंकि मुझ पर समाज-सेवा का दौरा कभी नहीं पड़ा था और न ही मेरे अंदर कोई ऐसा मदर टेरेसाई नर्म कोना था जिसमें मैं ऐसे पागलों और लावारिसों को पनाह देता।

मैं तेज़ी से सोच रहा था कि क्या करूँ। अचानक मुझे ख्याल आया कि शायद उस बीयर बारवाली लड़की को बूढ़े के घर का पता मालूम हो। मैंने तुरंत एक टैक्सी रूकवाई। बूढ़े को सहारा देकर टैक्सी में बैठाया और ड्राइवर को सेंडहर्स्ट रोड ले चलने को कहा।

जब हम वापस सेंडहर्स्ट रोड के बार में पहुँचे, तब रात के साढ़े ग्यारह बज चुके थे। ड्राइवर ने जैसे ही ब्रेक लगाया, बूढ़े का श्लथ शरीर मेरी गोद में लुढ़क गया। वह या तो सो रहा था या बेहोशी के आलम में था। मैंने उसे सँभालकर सीट पर लिटा दिया।

"तुम पाँच मिनट यहीं रूको, मैं अभी आता हूँ।" मैंने ड्राइवर से कहा और टैक्सी से नीचे उतर आया। ड्राइवर ज़रा पसोपश में पड़ गया। उसे संदेह था कि कहीं मैं बिना किराया दिए इस मुसीबत को उसके गले न मढ़ जाऊँ। मैंने पचास का एक नोट उसके हाथ में थमा दिया और सीढ़ियाँ चढ़कर बार में अंदर दाखिल हुआ।

दरवाज़ा खुलते ही संगीत की बहुत तेज़ आवाज़ ने मुझ पर हमला किया। वह खोपड़ी को सनसना देनेवाला संगीत था। मैंने ध्वनियों का इतना भयंकर इस्तेमाल पहले कभी नहीं सुना था। कुछ देर की चकराहट के बाद हल्की नीली रौशनी में मैंने उस लड़की को खोजना शुरू कर किया। वह डांसिंग फ्लोर पर कुछ और लड़कियों के साथ नाच रही थी। मैंने आगे बढ़कर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की कोशिश की। वह एक मालदार आदमी को रिझाने के लिए बार-बार अपने बाल लहरा और कूल्हे मटका रही थी। सामने की कुर्सी पर बैठा वह अधेड़ ऐयाश, जिसके गले और उँगलियों में सोना बहुत अश्लील ढंग से चमक रहा था, उस लड़की की हर अदा पर सौ-सौ के नोट निछावर कर रहा था।

बहुत कोशिश और इशारे करने के बाद भी जब लड़की ने मेरी तरफ ध्यान नहीं दिया तो आखिरकार मुझे भी जेब से नोट निकालने पड़े। नोट हाथ में आते ही मैंने देखा- बार के हर वेटर, स्टूअर्ट और डांसर्स का ध्यान अब मेरी तरफ था। लड़की की तरफ मैंने सिर्फ एक नज़र से देखा और वह मुस्कारती हुई मेरे पास आ गई। नोट उसके हाथ में देने से पहले मैंने दो-तीन बार ऊँची आवाज़ में कहा, "मुझे तुमसे कुछ ज़रूरी बात करनी है।"

दूसरी आवाज़ों के कारण उसे मेरी बात समझ में नहीं आई। वह हाथ पकड़कर मुझे पिछले दरवाज़े की तरफ ले गई। दरवाज़े के उस तरफ रेस्तराँ का किचन था।

"हाँ बोलो जल्दी, क्या बात है? मैं अपना कस्टमर छोड़कर आई हूँ।"

"शाम को मैं जिस बूढ़े के साथ आया था, क्या तुम उसे जानती हो?"

"हाँ-हाँ, वो मेरा रेगुलर कस्टमर तो नहीं है, पर आता है तो सबकी तबीयत खुश कर देता है।"

"उसकी तबीयत खराब है... क्या तुम उसके घर का पता जानती हो?"

"पक्का पता नहीं मालूम, लेकिन शायद वह दादर के कबूतरखाने के आसपास किसी चाल में रहता है। क्या तो नाम है उस चाल का... याद नहीं आ रहा अभी।"

"देखिए, मैं इस शहर में नया हूँ। मुझे यहाँ के रास्तों के बारे में कुछ नहीं मालूम। क्या आप इस मामले में मेरी मदद कर सकी हैं?"

"नहीं।" उसने साफ मना कर दिया, "आप समझते क्यों नहीं? मैं अपना कस्टमर छोड़कर नहीं जा सकती।"

मैं चुप हो गया। बार से बाहर निकलते ही मैंने टैक्सी के पास जाकर खिड़की से अंदर झाँका। बूढ़ा अभी तक ज्यों का त्यों लेटा था- किसी लाश की तरह। मैंने दरवाज़ा खोला और अंदर सीट में धँस गया।

"दादर ले चलो!" मैंने ड्राइवर से कहा। मुझे अपनी आवाज़ बहुत थकी-हारी-सी जान पड़ी।

ड्राइवर ने तुरंत चाबी घुमाकर एंजिन स्टार्ट किया। थोड़ी दूर जाकर एक यू टर्न मारा और लंबी-चौड़ी सड़क पर टॉप गियर में टैक्सी दौड़ा दी।

मैंने एक सिगरेट सुलगा ली और अपने विचारों को खामोशी से चबाने लगा।

यहाँ तक कि मेरी कनपटियाँ दुखने लगीं। उन चबाए हुए विचारों की लुगदी में से पता नहीं कब शून्य निकला और उस शून्य के बोझ से दबकर जाने कब मेरी आँखें मुँद गई।

ड्राइवर ने जब कंधा थपथपाकर मुझे नींद से जगाया तो कुछ देर तो कुछ समझ ही नहीं आया। मैंने अपना सिर ज़ोर से झटककर खुमारी और नींद को दूर हड़काया और बूढ़े को होश में लाने के लिए हिलाया-डुलाया, लेकिन सिर्फ हूँ-हूँ करने के अलावा उसने कोई हरकत नहीं की। आखिर नीचे उतरकर मैंने उसकी बाहों के नीचे हाथ डालकर उसे दरवाजे से बाहर खींच लिया। मैं जब बूढ़े के शरीर को घसीटते हुए सड़क के किनारे ले-जा रहा था, तब मैंने देखा कि बावजूद बेहोशी के बूढ़े ने अपने बैग को नहीं छोड़ा था। उसका पूरा शरीर बेहोश था, लेकिन वह था पूरी तरह होश में था जिस हाथ से उसने बैग से बाहर झाँकती सेक्सोफोन की गर्दन को पकड़ रखा था।

मैंने उसकी देह को कबूतरखाने की ग्रिल से टिका दिया। पलटकर टैक्सी का भाड़ा चुकाया और रिस्टवॉच की तरह देखा। सवा तीन बज रहे थे। यह रात और सुबह के बीच की ऐसी घड़ी थी जब न तो मैं कुछ कर सकता था, न कहीं जा सकता था। कुछ देर तक इधर-उधर की सोचने के बाद मैं भी बूढ़े के पास ग्रिल से पीठ टिकाकर बैठ गया।

रात के उस आखिरी पहर में जब सारी हरकतें सो चुकी थीं और कहीं से कोई आवाज़ नहीं आ रही थी, मुझे अपने दिल की धड़कनें सुनाई दीं। मैं अपने बारे में सोचने लगा। अपने बाप की दौलत से दुश्मनी मोल लेने के बाद मैं जिस तरह से तुच्छ आमोद-प्रमोद में ज़िंदगी को खर्च कर रहा था, उसमें किसी समझदार अनुराग की कोई गुंजाइश नहीं थी। अपनी स्वतंत्र अप्रतिबद्धता की शेखी, जिसके लिए मैंने अपने कैरियर तक को लात मार दी थी, को कायम रखने के लिए मैं हमेशा जिस सूखी अकड़ का इस्तेमाल करता था, उसमें बारिश,

शराब, खून और सेक्सोफोन की एक करुण धुन ने नमी ला दी थी। मैं उस नमी के नर्म आगोश में एक थके हुए बच्चे की तरह सो गया।

एक-साथ कई पंखों की फड़फड़ाहट ने मुझे नींद से जगाया। मैंने आँखें मलते हुए इधर-उधर देखा-बूढ़ा नदारद था। एक बार फिर पीठ के पीछे पंखों की फड़फड़ाहट सुनाई दी। मैंने पलटकर देखा, वह बूढ़ा कबूतरखाने के बीचोंबीच लेटा था और उसके जिस्म पर कई कबूतर चहल-कदमी कर रहे थे, इतने अधिक कि उसका पूरा शरीर उनसे पट गया था। यहाँ तक कि चेहरा भी ठीक से दिखाई नहीं दे रहा था। मुझे संदेह हुआ, कहीं वह मर तो नहीं गया, लेकिन मुझे अपने इस बेवकूफाना संदेह पर तुरंत शर्म आई, क्योंकि मरे हुओं पर कौए मँडराते हैं, कबूतर नहीं।

मैं कबूतरखाने की ग्रिल फाँदकर अंदर कूदा। मेरी इस कूद-फाँद से घबराकर सारे कबूतर उड़ गए। मैं बूढ़े के करीब पहुँचा और तब मुझे उसका चेहरा दिखाई दिया-स्वस्थ्य और मुस्कराता हुआ चेहरा, जिसमें कहीं पिछली रात के उपद्रव के चिन्ह नहीं थे। उसके चेहरे और तमाम कपड़ों पर बाजरे, ज्वार और मकई के दाने चिपके हुए थे। शायद उसने खुद अपने ऊपर कबूतरों का चारा फैला रखा था।

उसने स्नेह से मेरी तरफ हाथ बढ़ाया। मैंने जैसे ही उसके हाथ में हाथ दिया, एक कबूतर आकर फिर उसके हाथ पर आ बैठा, वहीं चितकबरा कबूतर, जिसके पैर में काला धागा बँधा था, जो कल शाम बूढ़े के कंधे पर बैठा था।

"तुम चुपचाप खड़े रहना। मेरा हाथ छुड़ाने की कोशिश मत करना। फिर देखना, यह धीरे-धीरे तुम्हें भी अपना दोस्त बना लेगा।"

मैंने बूढ़े की बात पर सहमति में गर्दन हिलाई और खुशी-भरे आश्चर्य के साथ देखा-वह कबूतर, जो हम दोनों के हाथों के 'मिलन' पर बैठा था, उसने झटके से गर्दन उठाकर सीधे मेरी आँखों में देखा। उसकी आँखों में कौतूहल और अजनबीपन था। कुछ देर तक मुझे देखते रहने के बाद उसने गर्दन झुकाई और

दो-तीन कदम आगे बढ़कर बूढ़े के हाथ से मेरे हाथ पर आ गया। मुझे उसके पंजे के खुरदरे स्पर्श से हल्की-सी सिहरन हुई, लेकिन मैंने अपने हाथ को काँपने नहीं दिया। उसने गर्दन उठाकर फिर मेरी तरफ देखा और ज़रा झिझकते हुए दो कदम और आगे बढ़ा। कुछ देर तक मेरी विश्वसनीयता को आज़माने के बाद तीन-चार कदम आगे बढ़कर मेरी कलाई और बाँह के बीच पहुँच गया। अब उसकी आँखों में कोई डर नहीं था। अगले ही पल वह झपटकर मेरे कंधे पर आ बैठा। मैंने धीरे-धीरे अपना हाथ आगे बढ़ाया और उसके पंखों को सहलाने लगा।

"यह पहले रॉबर्ट का दोस्त था।" बूढ़े ने मेरे कंधे पर बैठे कबूतर को बड़े प्यार से देखते हुए कहा।

"उसे गए कितने दिन हो गए?" मैंने कबूतर की देह पर हाथ फेरते हुए पूछा।

बूढ़ा कुछ देर चुप रहा। वह उस क्षण की याद से थोड़ा ग़मगीन हो गया। एक-दो पल की चुप्पी के बाद उसने बड़ी मुश्किल से मुँह खोला, "आज उसकी पहली बरसी है।"

मैंने देखा, पिछली रात की वह यातना और हताश फिर उसके चेहरे पर मँडराने लगी। मैंने उसे उस सिकनेस से बाहर निकालने के लिए ज़ोर लगाकर उसके हाथ को अपनी ओर खींचा और उसकी बाँह में अपनी कलाई डालकर उसे खड़ा कर दिया। कहा, "चलो तुम्हें घर तक छोड़ दूँ।"

उसने ज़रा आश्चर्य से मेरी तरफ देखा - "तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मैं यहाँ रहता हूँ?"

"कल जब तुम होश खो बैठे थे, तब मैं फिर उसी बार में गया था।"

"लेकिन वहाँ तो मुझे कोई नहीं जानता, सिवाय उस लड़की के...।"

"हाँ, उसी लड़की ने मुझे पता दिया।"

"क्या वह मेरे बारे में कुछ कह रही थी?"

"नहीं, वह बहुत बिज़ी थी।"

बूढ़े ने एक गहरी साँस ली। फिर उसके चेहरे का भाव बिगड गया, जैसे उसने कोइ कड़वी चीज़ पी ली हो। वह मेरे कंधे का सहारा लेकर आगे बढ़ा। हम सड़क पार करके बाईं ओर से एक गली में मुड़ गए। उसने मेरी तरफ देखे बग़ैर पूछा, "जानते हो वह लड़की कौन थी?"

मैंने इन्कार में सिर हिलाया और जिज्ञासा से उसकी तरफ देखा। वह कुछ कहना चाहता था, पर कहते-कहते रह गया। उसके चेहरे पर फिर कड़वेपन को निगलने का कष्ट उभर आया।

आगे जाकर वह एक और पतली गली में मुड़ गया। वह मुश्किल से आठ-दस फीट चौडी गली थी, जिसके दोनों तरफ चालें थीं। लकड़ी के बरामदों और सिढ़ियोंवाली बहुत पुरानी गली और सीली हुई चालें, जिनके हर कोने में ठहरी हुई बासी हवा, उमस, ऊब और अँधेरे ने स्थायी कब्जा कर लिया था।

चरमराती हुई सीढ़ियों पर रेलिंग के सहारे चढ़ने के बाद हम दूसरे माले की चौथी खोली के पास पहुँचे। उसने बहुत ज़ोर-ज़ोर से हाँफते हुए अपनी जेब से चाबी निकाली और दरवाज़े का ताला खोल दिया।

"मैं अब चलता हूँ।" मैंने उससे विनम्र शब्दों में इजाज़त ली।

उसने ज़रा प्यार-भरी नाराज़गी से मुझे देखा, "मैं अभी इतना गया-गुज़रा नहीं हूँ कि तुम्हें एक कप चाय भी ना पिला सकूँ।" वह हाथ पकड़कर मुझे अंदर खींच ले गया।

अंदर सामान के नाम पर सिर्फ एक पलँग और एक मेज़ थी। पलँग के ऊपर एक बहुत गंदा बिस्तर बिछा हुआ था जिसके सिरहाने-पैताने का कोई ठिकाना नहीं था। कमरे की दीवारों पर जब मेरे नज़र गई तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। दीवारों पर जगह-जगह कीलें गड़ी हुई थीं और उन पर तरह-तरह के

वाद्य टँगे थे। सबसे पहले मेरी नज़र तबले पर गई उसका चमड़ा उधड़ गया था और उसके अंदर चिड़ियों ने घोंसला बना लिया था। तबले की बगल में एक टूटा हुआ वायलिन था, जिसके तार नदारद थे। दीवार के कोने में सारंगी थी, मकड़ी के जाले से घिरी हुई। सारंगी के ऊपर बाँसुरी लटक रही थी, जिसके छेदों में फ़फूँद जम गई थी और उसके माउथपीस को दीमक ने चाट लिया था। नीचे फर्श पर हारमोनियम पड़ा था, जिसकी हड्डी-पसली एक हो गई थी।

मैं तब तक इन अवशेषों का अवलोकन करता रहा था जब तक बूढ़ा बरामदे में जाकर किसी 'छोकरे' को चाय के लिए आवाज़ देकर लौट नहीं आया। चाय लेकर जो छोकरा आया, उसने चाय की प्यालियाँ हमारे हाथ में थमाने की बजाय अपनी जेब से एक छोटी-सी नोटबुक और कलम निकाली। बूढ़े ने दोनों चीज़ें हाथ से ले लीं। वह उस उधार-खाते के गँदे पन्नों को उलटने लगा। फिर एक पन्ने पर कुछ लिखने के लिए जैसे ही उसने कलम आगे बढ़ाई, लड़के ने बीच में टोक दिया, "अभी की दो कटिंग मिला के सत्तर चाय हो जाएँगी। सेठ मेरे ऊपर बोम मार रेला है। जभी पइसा देंगा तभी चाय देना-अइसा बोलेला है..."

बूढ़े ने केवल एक बार उस लड़के की तरफ देखा। फिर जेब से रात के पानी में भीगे हुए नोट निकाले। एक पचास और एक सौ का नोट निकालकर लड़के के हाथ में थमाया, उधार-खाते को फाड़कर गैलरी से बाहर खुली सड़क पर फेंक दिया और चाय की प्यालियाँ उसके हाथ से छीनकर चाय मोरी में बहा दी।

लड़के पर उसके इस व्यवहार को कोई असर नहीं पड़ा। वह चुपचाप गिलास उठाकर चला गया।

कुछ देर तक वहाँ खामोशी छाई रही। फिर अचानक उसके ऊपर दौरा पड़ गया- "तुम बैठे रहना...मैं अभी आता हूँ।"

उसने कड़वा-सा मुँह बनाया और गैलरी पार करे धड़ाधड़ सीढ़ियाँ उतर गया।

बुढ़ापे की तुनकमिज़ाजी कई बार बचपने की नादानी से भी बदतर साबित होती है और फिर इस बूढ़े का मामला तो और भी गड़बड़ था। मुझे लगा कि इस बखेड़ेबाज़ आदमी के साथ अगर मैं ज्यादा देर तक रहा तो कभी भी किसी बड़े झंझट में फँस सकता हूँ। एक पल के लिए मुझे यह खयाल आया कि चुपचाप यहाँ से खिसक जाऊँ, लेकिन मेरी जिज्ञासा अभी शांत नहीं हुई थी। मैं और ज्यादा गहराई में जाकर इस आदमी के भीतर के उस 'स्वर' को सुनना चाहता था, जो दुनिया के कई अंगड़-खंगड़ प्रलापों के नीचे दबा हुआ था।

मुझे एक डर यह भी था कि कहीं उस स्वर को खोजते-खोजते मैं इतना नीचे चला जाऊँ कि वापस ऊपर आना मुश्किल हो जाए, क्योंकि नीचे काई थी, उलझी हुई करूणा थी और कई पथरीले कटाव थे, जिनमें उलझ-फँसकर मैं डूब सकता था। लेकिन बावजूद इस डर के, मेरी मनःस्थिति उस लालची गोताखोर जैसी थी जो दक्षिणावर्त शंख पाने के लिए जिन्दगी-भर गोते लगाते रहता है, बिना जान की परवाह किए, बिना यह जाने कि जो चीज़ वह पाना चाहता है, उसकी असली पहचान क्या है।

जब पिछली बातें याद करता हूँ तो मुझे अपनी चरम जिज्ञासा के कारण अपने-आपको दोष देने का कोई कारण नज़र नहीं आता। मेरी उत्कंठा के पीछे छुपी हुई नीचता नहीं थी। मै बस थोड़ा-सा उलझ गया था और चूंकि यह उलझन बहुत नाजुक थी इसलिए अपनी तमाम तटस्थता के बावजूद मैं इस चिपचिपाहट से खुद को छुड़ा नहीं पा रहा था।

उसके अजायबघर में उसका इंतजार करते-करते आखिर मैं थक गया रात की निशाचरी के कारण मेरा सिर भी सनसना रहा था। कुछ ही देर में मुझे झपकी लग गई।

एक हल्की आहट से जब मेरी आँखें खुलीं तो मैंने देखा, वह मेरे सामने दो प्याले लेकर खड़ा था, लेकिन उसमें से चाय की खुशबू नहीं, देशी शराब के भभके उठ रहे थे। उसने एक गिलास मेरी तरफ बढ़ाया और दूसरा अपने होंठों से लगा लिया। एक ही साँस में पूरा गिलास खाली करने के बाद उसने शर्ट की बाँह में मुँह पोंछा और बहुत अजीब नज़रों से मुझे देखा। उसकी सुर्ख आँखों और उसके अराजक तरीकों से स्पष्ट था कि वह कल की तुलना में आज ज्यादा फॉर्म में है। उसका वह हाथ काँप रहा था, जिस हाथ में उसने मेरे लिए शराब का प्याला थाम रखा था।

"यह मेरा नहीं, रॉबर्ट मास्टर का कमरा है। तुम अभी मेरे नहीं, रॉबर्ट मास्टर के मेहमान हो। रॉबर्ट-घराने के सुबह की शुरूआत दारू से होती है। अगर तुम्हें इस घराने के अदब-कायदों को सीखना है तो गिलास मुँह से लगा लो।"

मैं धीरे-से मुस्काया और उसके हाथ से गिलास लेकर एक ही साँस में खाली कर दिया।

"वेरी गुड...वेरीगुड! तुम भी हमारी लाइन के आदमी हो। जमेगी... अपनी-तुम्हारी खूब जमेगी!"

उसने खुशी से चहकते हुए फिर दो गिलास तैयार किए और हमने उस दिन का आगाज़ एक ऐसे ढंग से किया जिसका अंजाम कुछ भी हो सकता था।

शराब का पहला प्याला किसी बाज़ की तरह झपटते हुए मेरे सीने में उतरा था, दूसरे प्याले की शराब ज़रा धीरे-धीरे किसी चील की तरह मँडराने लगी। मैं धीर-धीरे बहुत ऊपर उठता चला गया, लेकिन नीचे की तमाम चीज़ें मुझे उतनी ही साफ नजर आने लगीं। दूसरा गिलास खत्म करने के बाद मैंने दीवार पर लटकते वाद्यों को गहरी नज़र से देखा। इस बार मेरे देखने में कुछ फर्क था। कुछ ही देर पहले मेरे लिए ये चीज़ बेजान थीं, लेकिन अब उनमें से कोई अर्थ ध्वनित हो रहा था।

"मुझे अपने इन दोस्तों से नहीं मिलवाओगे?" मैंने वाद्यों की तरफ इशारा करते हुए पूछा।

बूढ़ा अपने गिलास में कँपकँपाती शराब को बड़े ग़ौर से देख रहा था। उसने भौंहें उठाकर मेरी तरफ देखा, फिर सीधे दीवार की तरफ नज़रें उठा दीं। वह बड़े अजीब ढंग से मुस्काया। गिलास खाली करके उसने मेज़ पर रखा और दीवार के पास चला गया। सबसे पहले तबले पर हाथ रखा, "ये रफीक खान है। उस्ताद सलीमुद्दीन खाँ साहब का सबसे छोटा और सबसे आवारा लौंडा। पहले कांग्रेस हाउस में किसी बाई के मुजरे में तबला बजाता था। बाद में फिल्म-लाइन में आ गया।" तबले को पीछे छोड़कर उसने सारंगी पर उँगली रखी, "और यह सलीम भी उसी का जोड़ीदार था। इनकी संगत में बाद में ये वासुकी प्रसाद और ये जमुनादास भी बिगड़ गए (उसका इशारा बाँसुरी और शहनाई की तरफ था)। ये चारों अपने फन और धुन के पक्के थे, मगर उनके जीवन में कोई लय-ताल नहीं थी। बहुत बेसुरे और बेताले थे चारों-के-चारों। मगर थे बहुत ईमानदार, इसमें कोई शक नहीं।" एक बार चारों वाद्यों को बहुत नाज़ और प्यार से देखने के बाद उसने जमीन पर पड़े हारमोनियम पर नज़र डाली, "यह नीतिन मेहता का हारमोनियम है। यह लौंडा सबसे ज्यादा चालू था। पाँच साल पहले हमारे पास सा-रे-गा-मा सीखने आया था और आज बहुत पॉपुलर म्यूज़िक डारेक्टर है, क्योंकि इसकी उँगलियाँ हारमोनियम से फिसलकर तुरंत सिंथेसाइज़र पर चली गई थीं और नीयत संगीत से उचटकर धंधे पर लग गई थी। हर तरह के चांस और स्कोप में अपनी टाँगें घुसेड़ेते हुए उसने एक ऐसा धँधरा घोर मचाया कि कुछ समझना मुश्किल हो गया। बाद में उसे एक सिंधी पार्टनर मिल गया। उसने संगीत के धंधे को बहुत बड़े पैमाने पर इन्वेस्टमेंट किया। पुराने साज़ और साज़िदों की जगह नये यंत्र आ गए। पहले रिकॉर्डिंग के दौरान डेढ़-दौ सौ साज़िदें जमा होते थे, पर अब तमाम साज़ों की आवाज़ों और उनके अलग-अलग इफेक्ट्स के लिए केवल एक ही इलेक्ट्रॉनिक यंत्र काफी है। उस यंत्र के खिलाफ,

मैंने और रॉबर्ट ने कई बार आवाज़ बुलंद की। कई बार हमने 'फिल्म आर्टिस्ट एसोसिएशन' को दरख़्वास्त दी कि इस यंत्र पर पाबंदी लगा दी जाए मगर अफसोस... न तो इस मामले में किसी ने हमारा साथ दिया और न आर्टिस्ट एसोसिएशन ने कोई कदम उठाया..."

अपने कुछ साथियों का परिचय देने और गुज़रे हुए हालात की लंबी तफसील पेश करने के बाद उसने सिगरेट का पैकेट जेब से निकाला, एक सिगरेट अपने होंठों के बीच रखकर उसने पैकेट मेरी तरफ बढ़ाया। मैंने भी चुपचाप सिगरेट सुलगा ली।

दो-तीन गहरे कश खींचने के बाद वह बहुत ग़ौर से और कुछ-कुछ सहानुभूतिपूर्ण नज़रों से वायलिन को देखने लगा- "सबसे ज्यादा मुझे दास बाबू पर तरस आता था... बेचारे ए ग्रेड के आर्टिस्ट होते हुए भी सी-ग्रेड की जिंदगी जीते थी। बहुत शर्मीले और संजीदा आदमी थे। ट्रेजिक धुनों के लिए उन्हें खासतौर से बुलाया जाता था। नीतिन मेहता जैसे हरामियों ने उसका बहुत मिसयूज़ किया। वह एक ही सिटिंग में उससे चार-पाँच धुनें रिकॉर्ड करवा लेता था। फिर उन धुनों को काट-छाँटकर अलग-अलग गानों और सिचुएशन्स में इस्तेमाल करता था। अपनी धुनों की इस दुर्गति से दास बाबू बहुत उदास हो जाते थे, मगर कभी किसी से शिकायत नहीं करते थे...

"एक बार एक गाने की कंपोज़िंग के दौरान वे वायलिन बजाते-बजाते रोने लगे। उस गाने के अंत में मुझे एक लंबा पीस बजाना था, मगर मैं उठ गया और दास बाबू की बाँह पकड़कर स्टूडियो से बाहर निकल आया।"

सिगरेट के ठूँठ को तिपाई पर पड़ी ऐश-ट्रे में मसलकर उसने कुर्सी नज़दीक खींच ली और अपने लड़खड़ाते हुए पाँव को संतुलित करते हुए कुर्सी पर बैठ गया, फिर बोला, "उस रात जब पूरी चाल सो गई, तब आधी रात के बाद मुझे दास बाबू की खोली से वायलिन की आवाज़ सुनाई दी और मैं देखे बग़ैर यह जान गया कि दास बाबू सिर्फ वायलिन नहीं बजा रहे थे, रो भी रहे थे। कुछ

देर तक मैं चुपचाप सुनता रहा। मैंने पहले कभी दर्दनाक स्वर नहीं सुने थे। आखिर मुझसे रहा नहीं गया। मैंने अपना सेक्सोफोन उठाया और उसकी पीठ सहलाने के लिए एक भारी स्वर उनकी खिड़की की तरफ उछाल दिया। मेरी हमदर्दी से पहले वे ठिठक गए, फिर उनका वायलिन एकदम फफक पड़ा। मैंने उसे रोने दिया। सेक्सोफोन के चौड़े सीने पर सिर रखकर रोती वायलिन की उस धुन को मैं कभी नहीं भूलूँगा... वह बहुत लंबी, घुमावदार और इतनी कातर धुन थी कि सेक्सोफोन जैसा दिलेर भी कुछ देर के लिए विचलित हो गया। लेकिन इससे पहले कि मैं अपना संतुलन खो देता, प्यानो के हल्के स्पर्श ने मुझे ढांढस बँधाया। रॉबर्ट का एक पुराना नोट हमारे स्वरों की तरफ बाहें फैलाते हुए आया और हम तीनों बगलगीर हो गए।...

"फिर हमारी यह तिकड़ी आगे बढ़ी, लेकिन कुछ ही देर बाद पीछे से सारंगी की आवाज़ आई और वह बहुत हड़बड़ी में हमारी तरफ दौड़ती चली आई जैसे हम उसका साथ छोड़कर कहीं जा रहे हों। हमने अपनी स्वरयात्रा में उसे भी शामिल कर लिया। हम उसे छोड़ नहीं सकते थे, क्योंकि वह बहुत भावुक थी और बात-बात में दुखी हो जाना उनके स्वभाव में शामिल था।.....

"फिर बाँसुरी और शहनाई की भी नींद खुल गई। उन दोनों की अलसाई-सी, अँगड़ाइयाँ लेती आवाज़ें पहले बहुत सुस्त कदमों से बाहर आईं, फिर यह देखकर कि हम बहुत दूर निकल गए हैं, दोनों ने एक-साथ अपनी चाल तेज़ कर दी और कुछ ही देर में वहाँ स्वरों का तूफान घुमड़ने लगा। बिना किसी उद्देश्य और बिना किसी रिहर्सल के खुद-ब-खुद वहाँ एक ऐसा आर्केस्ट्रा शुरू हो गया, जिसका कोई पूर्वनिर्धारित 'शो' नहीं था, जिसे सुननेवाला कोई 'रसिक श्रोता' नहीं था, क्योंकि यह कोई कंपोज़ीशन नहीं, कुछ आवारागर्दों की अराजकता थी। हम सब एक-दूसरे के साथ धींगा-मस्ती कर रहे थे। हर स्वर अपने प्रतिद्वंद्वी स्वर को पीछे छोड़ आगे निकल जाना चाहता था। प्यानो मदमस्त हाथी की तरह सबको कुचल रहा था। सारंगी प्यानो की टाँगों के बीच से

निकलकर उसे छकाती हुई आगे बढ़ गई। शहनाई की बेहद तेज़ और पतली धारवाली आवाज़ ने सारंगी के तार काट दिए, मगर साँस लेने के लिए जैसे ही शहनाई रूकी, बाँसुरी ने उस अँतराल में एक लंबी छलाँग लगाई और सबसे आगे निकल गई।...

"मैंने बाँसुरी को सबक सिखाने के लिए सेक्सोफोन होंठों से लगाया, मगर अकस्मात् मेरा ध्यान इस बात पर गया कि वायलिन की आवाज़ कहीं बिछड़ गई है। कुछ देर तक मैं ध्यान देकर सुनता रहा कि शायद दूसरी तेज़ आवाज़ों के कारण वायलिन की आवाज़ दब गई होगी, लेकिन नहीं, वह कहीं सुनाई नहीं दे रही थी। बाकी सब बहुत मस्ती में थे, इसलिए उन्हें कुछ पता नहीं चला, लेकिन मैं थोड़ा सजग था। ज़रा और ध्यान देने पर मुझे यह आभास हुआ कि संगीत की संगत में कहीं कुछ असंगत हो रहा है... मुझे किसी चीज़ के तोड़े जाने की आवाज़ सुनाई दे रही थी... ये स्वराघात बहुत भयानक थे। उनमें किसी चीज़ को हमेशा के लिए खत्म कर देनेवाला हत्यारापन था। दो-तीन बड़े आघातों के बाद वह आवाज़ बंद हो गई। मैं सोच में पड़ गया। मुझे हालाँकि यह समझ में नहीं आया कि वह किस चीज़ के पटकने या पीटने की आवाज़ थी, मगर यह तो साफ ज़ाहिर था कि वह आवाज़ दास बाबू की खोली से ही आई थी। मैंने सेक्सोफोन मेज़ पर रख दिया और दरवाज़ा खोलकर बाहर गैलरी में निकल आया। सामने की चाल में सब खिड़की-दरवाजे बंद थे। दास बाबू की खोली के दरवाज़े की दरारों से बल्ब की पीली रौशनी की लकीरें चमक रही थीं। बीच-बीच में उन चमकाती लकीरों को कोई परछाईं काट देती थी। वे लकीरें जब बार-बार और बहुत तेज़ी से कटने लगीं, तब मुझे मालूम हुआ कि अंदर कोई छटपटा रहा है... मैं तेज़ी से सीढ़ियाँ चढ़ गया। दास बाबू की खोली के बंद दरवाज़े के सामने पहुँचकर मैंने अपने धड़धड़ाते सीने को एक हाथ से थामा और दूसरे हाथ से दरवाज़े को धकेला। अंदर दास बाबू फर्श पर गिरे पड़े थे। वायलियन के टुकड़ों के बीच फर्श पर वे अपना सीना थामे छटपटा रहे थे। मैंने

लपककर उन्हें अपनी बाहों में ले लिया। मुझे देखकर उनके चेहरे पर हल्की-सी राहत आई, मगर अगले ही पल किसी अज्ञात शक्ति ने उनके चेहरे पर पोंछा मार दिया।"

दास बाबू के जीवन के अंतिम क्षणों का जो भयानक वर्णन बूढ़े ने किया, वह काफी देर तक एक फिल्म की तरह मेरी कल्पना में घूमता रहा। बूढ़े के चुप हो जाने के बावजूद उसके शब्द मेरे कानों में गूँजते रहे। मैं उस संत्रस्त कर देने वाले असर के जब बाहर आया, तब मैंने देखा, बूढ़ा किसी गहरी सोच में डूबा था। मैंने उसके मौन पर कोई दरार नहीं पड़ने दी।

हम दोनों पता नहीं कितनी देर चुप रहते, अगर हमारे मौन के बीच वह चितकबरा कबूतर न चला आया होता। वह पहले कमरे की दहलीज़ पर बैठा कोतूहल-भरी आँखें मटकाते हुए बारी-बारी से हम दोनों को देखता रहा, फिर उड़कर बूढ़े की गोद में जा बैठा। बूढ़ा हालाँकि किसी खयाल मे खोया था, लेकिन उसके हाथ आदतन कबूतर के पंखों को सहलाने लगे।

"वे इतने परेशान क्यों रहते थे?" मैंने ज़रा संकोच से पूछा।

"कौन?" बूढ़े ने मेरी तरफ देखकर पूछा।

"दास बाबू?" मैंने कहा।

बूढ़ा इस सवाल से फिर अपसेट हो गया। उसने फिर कड़वा-सा मुँह बनाया और अचानक खड़ा हो गया। उसका हाथ फिर काँपने लगा। उस कँपकँपाहट को काबू में करने के लिए उसने मुट्ठी भींच ली। उसके चेहरे से लग रहा था कि वह फिर बिफर उठेगा, मगर वह कुछ नहीं कर पाया। अपने तशद्दुद से फड़फड़ाते होंठों से उसने दाँतों में भींच लिया।

उसकी हालत देखकर मैं भी सहम गया और कबूतर भी। उसने भयभीत नज़रों से बूढ़े को देखा और तुरंत पर फड़फड़ाते हुए कमरे से बाहर उड़ गया।

कुछ देर बाद मुझे पेट में मरोड़ हुई। मैं काफी देर से अंडकोष के दबाब

को भी टाल रहा था, लेकिन जब सहन नहीं हुआ तो मैं उठा और बीच में लटकते पर्दे को सरकाकर कमरे के दूसरे हिस्से में चला गया। वहाँ एक छोटी-सी रसोई थी और रसोई से लगा एक टीन का दरवाज़ा। रसोई के प्लेटफॉर्म पर बहुत-सी अंगड़-खंगड़ चीज़ें बेतरतीब पड़ी थीं। मैंने किसी चीज़ पर ध्यान नहीं दिया। मेरा ध्यान सिर्फ उस टीन के दरवाज़े पर था जिसके पीछे मेरी तात्कालिक यंत्रणा का निकास था।

संडास से बाहर आने के बाद मैंने ध्यान से सब चीज़ों को देखा। उन चीज़ों की अलग-अलग पहचान नहीं थी। वे सब एक संयुक्त कबाड़ में बदल चुकी थीं। आकार में बड़ा होने के कारण सिर्फ प्यानों अलग से पहचान में आ रहा था। मैं उसके पास गया, उसके ऊपर पड़े समान को इधर-उधर किया और ग़ौर से देखा, उसके दोनों फुट-पैडल टूटे हुए थे। की-बोर्ड की अधिकांश चाभियाँ भी उखड़ गई थीं। मैंने उसकी अंदरूनी हालत देखने के लिए लकड़ी के ढक्कन को ऊपर उठाया और अगले ही पल मुझे ढक्कन बंद कर देना पड़ा। अंदर कुछ भी नहीं था। न गद्दियाँ, न स्ट्रिंग्स, न फेल्टहेमर। सिर्फ खालीपन था और उस खालीपन में से एक अजीब-सी बू आ रही थी। वहाँ कुछ मर गया था, जो सड़ रहा था...

पर्दा हटाकर मैं वापस कमरे के अगले हिस्से में आ गया।

"यह प्यानो क्या रौंबर्ट मास्टर का है?" मैंने बुढ़ऊ से पूछा।

उसने हाँ में सिर हिलाया और चेहरा झुका लिया।

"वह इतना घायल क्यों है?" मैंने फिर एक मूर्खतापूर्ण सवाल कर डाला, मैं नहीं जानता था कि मेरा यह सवाल कितना ग़ैरवाजिब और ग़ैरज़रूरी था। उसने झल्लाई हुई नज़रों से मुझे देखा, फिर कुर्सी से उठा, कमरे से बाहर निकला, तेज़ कदमों से गैलरी पार की और धड़ाधड़ सीढ़ियाँ उतरने लगा। मैं पहले तो हतप्रभ रहा गया, फिर किसी अज्ञात ताकत से वशीभूत होकर मैं भी उसके

पीछे भागा। मैं जब तक सीढ़ियाँ उतरकर गली में आया, तब तक वह गली पार कर चुका था, और जब मैं गली से बाहर निकला तब वह सड़क क्रॉस कर रहा था। मैंने अपनी रफ्तार तेज़ की, आते-जाते वाहनों से खुद को बचाते हुए सड़क पार की और दौड़कर उसके पास पहुँच गया।

"सुनो!" मैंने उसके कंधे पर हाथ रखकर हल्के दबाव से उसे अपनी ओर खींचा।

मेरी इस रूकावट से उसकी चाल लड़खड़ा गई- "क्या है?" उसका स्वर बहुत बिफरा हुआ था- "क्यों मेरे पीछे पड़े हो? जाओ रास्ता नापो... मुझे किसी की हमदर्दी की जरूरत नहीं है।"

"लेकिन तुम जा कहाँ रहे हो?"

"मैं कहीं भी जाऊँ, तुम कौन होते हो पूछनेवाले? तुम्हें क्या मतलब है?"

"मतलब है।" मैंने इस बार ज़रा कड़ी आवाज़ में कहा, "तुम क्या मुझे कोई चूतिया समझते हो?" मैंने उसकी शर्ट को अपनी दोनों मुट्ठियों में भींच लिया।

मेरी इस अकस्मात् चिड़चिड़ाहट से वह ज़रा ढीला पड़ गया। उसने मुँह बिचकाकर एक निश्वास छोड़ा और मैंने अपनी मुट्ठियाँ और कस लीं, "मैं जानता हूँ कि तुम बिल्कुल गए-गुज़रे और नाकाम आदमी हो और इस भ्रम में जी रहे हो कि तुम्हारे जैसा तीसमारखाँ इस दुनिया में और कोई नहीं है। मैं यह भी जानता हूँ कि तुम ज्यादा दिन जीनेवाले नहीं हो, क्योंकि तुम चाहते हो कि तुम्हारी मौत इतने दर्दनाक ढंग से हो कि दुनिया चौंक जाए। तुम इस तरह जो बदहाल ज़िंदगी जी रहे हो, वो इसलिए नहीं कि तुम बदहाल हो, इसलिए कि लोगों को अपनी तरफ आकर्षित कर सको... तुम अपने शरीर पर इन चिथड़ों को उसी तरह सजाकर रखते हो जिस तरह रंडियाँ अपने चेहरों को सजाती हैं...."

नशे में चूँकि मैं भी था, इसलिए थोड़ा लाउड हो जाना स्वाभाविक था, "गो

एंड फक योर आर्ट।" मैंने चिल्लाकर कहा, फिर तेज़ी से पलटकर तेज़ कदमों से चौराहे की तरफ जाने लगा। कबूतरखाने के पास जाकर मैं स्टेशन की तरफ जानेवाली सड़क पर मुड़ने ही वाला था कि मुझे अपने कंधे पर उसके हाथ का दबाव महसूस हुआ।

मैंने मुड़कर देखना ज़रूरी नहीं समझा।

"तुम्हें परेशान करने का मेरा इरादा नहीं था।" उसकी आवाज़ में हल्का कंपन था, "तुम मेरी वजह से बहुत परेशान हो गए... जाओ अब कभी मेरे जैसे घनचक्करों के फेर में मत पड़ना।"

मैंने पलटकर उसके दोनों कंधों पर अपने हाथ रख दिए, "देखो, मैं जानता हूँ रॉबर्ट और दास बाबू के बिना जीने में तुम्हें कितनी तकलीफ हो रही है, लेकिन शराब और व्यर्थ के चुतियापों में डूबकर क्या तुम उस महान् दुःख का अपमान नहीं कर रहे हो? क्या उस दुःख को तुम सेक्सोफोन के स्वरों के साथ सब्लीमेट (उदात्तीकरण) नहीं कर सकते?"

उसने बहुत विवश निगाहों से मुझे देखा और नकारात्मक ढंग से सिर हिलाने लगा, जैसे मैंने उससे किसी मरी हुई चीज़ को ज़िंदा करने का आग्रह किया हो। मैं उसके आसक्ति-शून्य चेहरे को देखता रहा। वहाँ कोरी शून्यता थी। न कोई चाव था, न कोई भाव। अपने चेहरे को मेरी नज़रों से बचाने के लिए उसने मुँह फेर लिया और कबूतरों के झुंड को देखने लगा।

वे सब चुग्गा चुग रहे थे - शहर की भाग-दौड़, आपा-धापी और परेशानियों से निर्लिप्त और बेखबर। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ा और लोहे की ग्रिल के पास जा खड़ा हुआ। अंदर उस गोल घेरे में फड़फड़ाते असंख्य सलेटी, सफेद और चितकबरे पंखों के शांत सौंदर्य में से वह कुछ खोज रहा था, कोई ऐसी चीज़ जो उसकी तात्कालिक तकलीफ को ढँक दे।

वह काफी देर तक यूँ ही खड़ा रहा। इस बीच उसने कमीज़ की बाँह से दो बार अपनी आँखें पोंछी। उसकी पीठ मेरी तरफ थी, इसलिए देख नहीं पाया

कि उसने अपनी आँखों में से क्या पोंछा था। कुछ देर बाद वह पलटा और सीधे मेरी आँखों की तरफ अपनी आँखें उठा दीं। उसने बहुत प्यार से मेरी तरफ देखा, फिर आगे बढ़कर अपनी बाँह मेरे कंधे में डाल दी और वापस मुझे अपने घर की तरफ ले-जाने लगा। घर पहुँचाते ही वह किसी नदीदे की तरह चीज़ों पर टूट पड़ा। उसने एक पुराना कपड़ा उठाया और जो चीज़ हाथ मे आई उसकी धूल झाड़ने लगा। फिर छत के कोनों में लटकते मकड़जालों पर झाड़ू फेर दिया। पूरे कमरे को अच्छे से झाड़ने-बुहारने के बाद उसने एक साफ कपड़े से तमाम वाद्यों को रगड़-रगड़कर चमका दिया। इस तमाम सफाई-अभियान के दौरान वह लगातार सीटी बजाता रहा। उसकी फूँक में धीरे-धीरे वजन बढ़ता गया और कुछ ही देर में उसने अपनी देह और आत्मा के बिखरे हुए स्वरों को एक तरतीब में 'ट्यून' कर लिया।

कुछ देर बाद पर्दा हटाकर पीछे चला गया। उसके किचन-कम-बाथरूम से काफी देर तक पानी बहने की आवाज़ आती रही। इस बीच मैंने कमरे की नई व्यवस्था पर निगाह डाली। अब सारे साज़ अपनी गरीबी और फटेहाली के बावजूद पूरे सम्मान के साथ चमक रहे थे। सिर्फ साज़ ही नहीं, पूरा असबाब अपनी असली रंगत में निखर आया था, सिर्फ एक एलबम को छोड़कर, जो कोने में पड़ी टेबल के एक किनारे उपेक्षित-सा पड़ा था। उसके कवर पर धूल जमी थी। मुझे उसकी बोसीदगी एतराज़ हुआ। मैंने कपड़ा उठाकर उसकी गर्द झाड़ दी और बिना कुछ सोचे-समझे उसे खोलकर देखने लगा। उसमें बहुत पुरानी तसवीरें थीं- उसके तमाम यार-दोस्तों की।

कुछ तसवीरें स्टेज-प्रोग्राम के दौरान खींची गई थीं और कुछ रिकॉर्डिंग स्टूडियो में। कहीं-कहीं पर एकाध प्राइज़-डिस्ट्रीब्यूशन और पार्टी के भी चित्र थे। वे उन दिनों के चित्र थे जब बूढ़ा जवान था। वह उन चित्रों में जिंदादिली और जवाँमर्दी की मिसाल की तरह मौजूद था।

लेकिन मध्यांतर के बाद एलबम की तस्वीरें ज़रा शांत, थोड़ी उदास और

अंत में बहुत पीड़ादायक होती चली गईं। एलबम में अंतिम पृष्ठों में दो पार्थिव शरीर शवयात्रा पर जाने से पहले की अंतिम घड़ियों के ज़ोरदार विलाप के बीच शांत पड़े थे। एक शरीर अर्थी पर था, दूसरा ताबूत में। ताबूतवाले भाव के दोनों हाथ नदारद थे। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। क्या यह रॉबर्ट मास्टर की तस्वीर है? क्या उसके दोनों हाथ???...

इससे पहले कि मैं इस खूनी अचंभे के बारे में कुछ सोच पाता, बूढ़ा पर्दा हटाकर बाहर आ गया और इस बार मैं उसे देखते ही रह गया। उसके शेव किए हुए चेहरे पर गजब की रौनक थी। उसने स्वेड की भूरे रंग की पतलून और सफेद शर्ट पहन रखी थी, जिसमें कहीं काई दाग-धब्बा नहीं था। उसकी इस सेहतमंद, साफ-सुथरी और पुरज़ोर एंट्री से मैं थोड़ा आश्वस्त हुआ। मुझे लगा कि वह अब स्थितियों की फेस करने की स्थिति में है।

वह पंखा खोलकर अपने लंबे बाल सुखा रहा था। उसके सफेद और मुलायम बाल उसके लंबे और गोरे चेहरे पर सिर्फ लहरा ही नहीं, बल्कि तैर-से रहे थे।

"तुम अब बिल्कुल सही लग रहे हो।" मैंने कहा।

उसने बालों पर ज़ोर-ज़ोर से उँगलियाँ चलाते हुए मेरी तरफ देखा - "क्या अब तक मैं ग़लत था?"

"नहीं।" मैंने मुस्कराते हुए कहा, "अब तक तुम गलत और सही के बीच थे।"

उसने सिर झटककर अपने बाल पीछे किए और बड़े ग़ौर से मेरी तरफ देखने लगा, "यार, तुम तो बड़े गुरू आदमी हो। तुम्हारे अंदर जो बैलेंस है, मुझे उससे जेलेसी हो रही है।"

"मैं एक बनिये का बेटा हूँ।" मैंने हँसते हुए कहा, "इसलिए तराजू हमेशा साथ लेकर चलता हूँ, हालाँकि नाप-तोल में मुझे बहुत नफरत है। मैं तुम्हारी

अनबैलेंस्ड और फक्कड़ ज़िंदगी से आकर्षित हुआ था और तुम मेरी बनियागिरी से प्रभावित हो, यह बड़ी विचित्र बात है!"

थोड़ी देर तक वह मुझे निहारता रहा। फिर पहली बार उसने मेरे व्यक्तिगत मामले में दिलचस्पी दिखाई- और बहुत संजीदगी से पूछा, "तुम करते क्या हो?"

"मैं फिलहाल कुछ नहीं कर रहा हूँ।" मैंने कहा।

"नहीं। मैं कैसे मान लूँ कि तुम फिलहाल कुछ नहीं कर रहे हो? तुम फिलहाल और कुछ नहीं तो एक बूढ़े और सनकी आदमी को तो बर्दाश्त कर ही रहे हो न?" वह हँसने लगा।

"नहीं।" मैंने भी उसकी हँसी का साथ दिया, "मैं तुम्हें बर्दाश्त नहीं, एन्ज्वाय कर रहा हूँ। तुम बहुत स्वादिष्ट और पचाने में उतने ही कठिन आदमी हो। तुम्हारे बाहर से कुरकरे और भीतर से रसीले स्वभाव में एक खास तरह का ज़ायका है।"

वह और भी ज़ोर से हँसने लगा, फिर उसने अपना सेक्सोफोनवाला बैग उठा लिया। मेज़ की दराज़ से एक गिफ्ट पैकेट निकाला और मेरा हाथ पकड़कर घर से बाहर आ गया।

"तुम्हारा घर मुझे घर-जैसा कम, रिहर्सलरूम-जैसा ज्यादा लगता है।" मैंने ज़ीना उतरते हुए का।

"दरअसल," उसने सीढ़ियों से नीचे उतरने के बाद मेरे कंधों पर हाथ रखते हुए कहा, "यह कमरा हम सबने मिलकर किराए पर लिया था, रिहर्सल के लिए। लेकिन बाद में यह ऐयाशी का अड्डा बन गया और उन लोगों के लिए तो इससे बड़ी कोई पनाहगाह नहीं थी, जो घर से अलग हो गए थे या अलग कर दिए गए थे। मेरा और रॉबर्ट का खाना-पीना, नहाना-धोना, सोना-उठना सब यहीं होता था..."

वह एक बार फिर अपने विगत में लौट गया, लेकिन इस बार की वापसी कुछ अलग तरह की थी। उसके लहजे में किसी सदमे के तात्कालिक बयान की बौखलाहट नहीं, स्थिरता थी, एक व्यवस्थित प्रवाह था-

"बावजूद हर तरह की बदसलूकी के, हम सब आपस में एक थे। हमारे झगड़े कई बार मार-पीट की नौबत तक भी पहुँचते थे, लेकिन जब 'संगत' होती थी तब सारी बातें भुला दी जाती थी; लेकिन एक अर्से बाद जब संगीत के धंधे में चेंज आया तो सब कुछ बदल गया। हमारा ग्रुप बिखर गया। सिर्फ एक ग्रेड के कुछ आर्टिस्ट बच गए। लेकिन सीनियर होने के बावजूद मुझे और रॉबर्ट को काम के मौके बहुत कम मिलते थे, क्योंकि जिस तरह की कंपोज़िंग नए दौर में चल रही थी, उसमें नकल पर आधारित चुतियापों की बौछार थी और प्यानो या सेक्सोफोन जैसे गंभीर वाद्यों की अकेले पीस के लिए कोई जगह नहीं थी।"

चलते-चलते वह रूक गया। फिर मुझे खींचने लगा। उसने सड़क पार की और हम एक कैफे में घुस गए। नाश्ते का ऑर्डर देने के बाद वह कुछ देर चुप बैठा रहा। फिर बिना मेरी ओर देखे कुछ बुदबुदाने लगा, जैसे मुझसे नहीं, खुद से बातें कर रहा हो, "साले नीतिन मेहता, एक तुम्हीं होशियार निकले। बाकी सब बेवकूफ थे। अच्छा किया तुमने जो तबले-पेटी को लात मार दी। अगर तुमने नए साज़ और नए तौर-तरीके नहीं अपनाए होते तो तुम्हारा भी यही हाल होता। हम लोग चूतिये थे जो साज की आन और स्वरों की शुद्धता का राग अलापते रहे। रॉबर्ट तो अपने-आपको बहुत तीसमारखाँ समझता था, क्योंकि उसके जैसा प्यानो-मास्टर पूरे मुंबई में कोई नहीं था। उसने तुम्हारे नए यंत्रों का मज़ाक उड़ाया था। वह उसे बच्चों का खिलौना और कंप्यूटर गेम कहता था। लेकिन आज उसी बच्चों के खिलौने के उसके 'हाथी' के चारों पाँव उखाड़ दिए। सिर्फ रॉबर्ट ही क्यों, उस समय तो ए ग्रेड का हर आर्टिस्ट इसी घमंड में रहता था कि उनके 'स्किल' को कोई मात नहीं दे सकता। लेकिन उनके 'स्किल' और मार्केट की जरूरत की बीच जो गैप आ गया था वो उन्हें दिखाई नहीं दिया।"

बूढ़ा अपनी रौ में बोल रहा था और बटर-ब्रेड के साथ कॉफी की घूँट भी ले रहा था। मुँह के इस दोहरे इस्तेमाल के कारण उसके गले में ठसका लग गया। मैंने तुरंत पानी का गिलास उठाकर उसके मुँह से लगा दिया। पानी के प्रवाह मे गले में फँसा ब्रेड का टुकड़ा नीचे उतर गया। थोड़ी देर खाँसने-खखारने को बाद उसने गहरी साँस ली और बड़ी हिकारत से सिर हिलाया, "आखिर उनका घमंड ही उनके लिए खतरनाक साबित हुआ। सब गए भाड़ में। कौन बचा अब पुरानों में? कौन कहाँ है और क्या कर रहा है कुछ पता नहीं। कभी मिल भी जाते हैं तो कतरा के निकल जाते हैं। एक बार मैंने वासुकी प्रसाद को चौपाटी में बाँसुरी बेचते देखा। उसने बाँसकी पतली-पतली कमाचियों में बाँसुरियाँ सजारखी थीं। वह बाँसुरी बेच भी रहा था और बजा भी रहा था। मैं उससे मिला नहीं। सिर्फ उसका बजाना-बेचना देखता रहा। अचानक मेरे भीतर से एक सवाल उठा कि अगर सेक्सोफोन पीतल के बजाय बाँस का होता और उसकी लागत भी बहुत कम होती, तो क्या मैं भी गली-गली में सेक्सोफोन बेचता फिरता? मुझे अपने भीतर से हाँ या ना में कोई जवाब नहीं मिला..."।

"और लाजवाब होना मेरे लिए हमेशा घातक होता है। हारकर मैंने खूब ज्यादा शराब पी ली और मेरे पैर लड़खडाने लगे। खुद को किसी तरह सँभालते हुए मैं चर्नी रोड के एक ओवरहेड रास्ते को पार कर रहा था। रास्ता पार करने के बाद मैंने सीढ़ियाँ उतरने के लिए जैसे ही पहली सीढ़ी पर पैर रखा, मुझे सबसे अंतिम सीढ़ी पर रॉबर्ट मास्टर दिखाई दिया। उसने भी सहारे के लिए रेलिंग पकड़ रखी थी और नाराज़ नज़रों से सीढ़ियों की ऊँचाई को देख रहा था। वह अपनी नशे में डोलती लंबी-चौड़ी देह, हाइ-ब्लड-प्रेशर से धकधकाते सीने और थकान से चूर पैरों की बिखरी हुई ताकत को बटोर रहा था। सीढ़ियाँ चढ़ना तो दूर, वह खड़े रहने लायक हालत में भी नहीं था; मगर मुझे भरोसा था कि वह सीढ़ी चढ़ जाएगा। वह हार माननेवालों में से नहीं था, चाहे जीत जानलेवा ही क्यों न साबित हो।...

"आखिर उसने होंठ भींच लिये और एक-साथ दो-दो सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। जब वह ऊपर आया तो मैंने हाथ बढ़ाकर उसे अपनी तरफ खींच लिया। और बहुत चिंतित स्वर में पूछा, "कहाँ से आ रहे हो? कहाँ थे इतने दिनों तक?"

वह सिर्फ हाँफता रहा। उसकी नजरें बैग में टँगे मेरे सेक्सोफोन पर थीं। उसने पूछा, "तुम स्टूडियो से आ रहे हो?"

मैंने ना में सिर हिला दिया। अगर मैं हाँ कहता तो वह मेरी जेब में हाथ डालकर जबरदस्ती मेरी दिन-भर की कमाई छीन लेता। मेरे पास रूपए इतने कम थे कि झूठ बोलने के सिवा कोई चारा न था। मगर झूठ बोलना हर किसी को नहीं आता। वह फौरन समझ गया कि मेरी जेब खाली नहीं है। उसने हाथ से झपटकर मेरा कॉलर पकड़ लिया और दूसरे हाथ से मेरी जेब टटोलने लगा - "साले झूठ बोलता है? ला निकाल सौ रूपए।"

"कॉलर छोड़ पहले।" मैंने प्रतिरोध किया। उसका मेरे कॉलर पर कसा पंजा ढीला पड़ गया। मैंने पैंट की जेब से जितने रूपए थे उतने निकालकर बहुत गुस्से और नफरत के साथ उसके हाथ में थमा दिए और अपना कॉलर छुड़ाकर बिना कुछ बोले सीढ़ियों की तरफ बढ़ा।

उसने फिर झपटकर पीछे से मेरा कॉलर पकड़ लिया। रूपए वापस मेरी जेब में ठूँस दिए और मुझे एक तरफ धकेल दिया, "साले, दोस्ती के लिहाज़ से उधार माँग रहा था। कोई भीख नहीं माँग रहा था। जा, आज के बाद कभी नहीं डालूँगा तेरी जेब में हाथ।"

मेरा गुस्सा उसकी इस हरकत से और भड़क गया। मैंने सीढ़ी चढ़कर दोनों हाथों से उसकी कमीज़ को दबोच लिया और उसे रेलिंग तक धकेलते हुए ले गया। मैंने उसे ऊँची आवाज़ में फटकारा, "दो साल से तेरी तानाशाही सह रहा हूँ। दो साल से न तू खुद चैन से जी रहा है, न मुझे जीने दे रहा है। बोल, क्या चाहता है तू? तकलीफ क्या है तुझे-यह बता!"

"उसने बहुत नाराज़ नज़रों से मुझे देखा। फिर नाराज़गी कम हो गई और विवशता डबडबा आई। उसने सिर झुका लिया। बहुत देर तक वह यूँ ही खड़ा रहा। उसकी चुप्पी ने मुझे बेसब्र कर दिया। नशे और गुस्से की रौ में मैंने उसे तीन-चार तमाचे जड़ दिए। मेरे इस आकस्मिक हमले से बचने की उसने कोई कोशिश नहीं की; केवल लिए लटकाए खड़ा रहा। वह अपने भीतर चकराती किसी चीज़ को पकड़ने की कोशिश कर रहा था। कुछ देर बाद उसने सिर ऊपर उठाया और मेरी बाँह पकड़कर मुझे घसीटने लगा।....

"हम जिस अपपटे ढंग से सीढियाँ उतर रहे थे, उसमें कभी भी गिर पड़ने का खतरा था। न तो वह खुद को सँभाल पा रहा था, न मुझे सँभलने का मौका दे रहा था। आखिर हम दोनों के पाँव एक-दूसरे से उलझ गए और उस उलझन ने हम दोनों को सरेआम तमाशा बना दिया-एक ऐसा तमाशा जिसे दिखने की फुरसत भी किसी को नहीं थी।....

"न उसने उस हास्यास्पद स्थिति की परवाह की, न मेरे सिर से बहते खून की। वह फुर्ती से उठा, मेरी कमीज़ का कॉलर पीछे से पकड़कर मुझे खड़ा किया और भीड़ को धकेलते हुए मुझे बीच सड़क में ले आया। मैंने अपने-आपको छुड़ाने की बहुत कोशिश की, मगर रास्ते-भर वह मुझे घसीटता रहा और एक नाइट बीयर बार के सामने ले-जाकर उसने मुझे ऐसे धकेला जैसे कोई हवलदार किसी मुजरिम को लॉकअप में धकेलता है।...

"बार के अंदर बजते तेज़ संगीत की सनसनाहट और जलती-बुझती रंगबिरंगी रौशनियों की चकाचौंध ने एक पल के लिए मेरे दिलो-दिमाग को चकरा दिया। हड़बड़ी में मैं एक बेट्रेस से टकरा गया। मैंने सहारे के लिए उस टेबुल के कोने को पकड़ लिया। कुछ देर के बाद मेरे सिर की चकराहट ज़रा कम हुई, मगर मुझे समझ नहीं आ रहा था कि रॉबर्ट मुझे वहाँ क्यों धकेल गया।...

"बाद में एक चीज़ मुझे सबसे पहले समझ में आई कि वहाँ डांसिंग फ्लोर

पर जिस पॉपुलर फिल्मी गाने पर मुजरा चल रहा था, उसकी धुन नीतिन मेहता ने कंपोज़ की थी। वही नीतिन मेहता जिसके लिए रॉबर्ट के दिल में नफरत के सिवाय कुछ नहीं था।...

"तभी वह गाना खत्म हो गया। एक पल की खामोशी के बाद एक बहुत तेज़ और धमाकेदार डिस्को गीत शुरू हुआ। यह गीत भी उसी फिल्म का था। नीतिन मेहता ने स्टीवी वंडर के एलबम से इसकी धुन लिफ्ट की थी और उसमें राजस्थान का चोली-घाघरा, भोजपुरी की कामुक ठुमकी, गुजरात का गरबा और पंजाब के भाँगड़े को बहुत भोंडे और अश्लील ढंग से मिलाकर एक बहुत ही अजीब कॉकटेल तैयार किया था। बेहद असरदार और तुरंत दिमाग पर हमला करने वाले हैवी मैटल के स्ट्रोक्स के साथ डांसिंग फ्लोर पर जो लड़की आई, उसे देखते ही हुल्लड़ मच गया। उसने बेहत तंग चोली और घाघरा पहन रखा था। चोली के पिछले हिस्से में कपड़ा नहीं था; सिर्फ एक पतली-सी डोर थी। दर्शकों की तरफ पीठ फेरे वह अपनी कमर और नितंब मटका रही थी। कुछ देर बाद ढोलक की एक तेज़ थाप से साथ उसने अपना मुँह घुमाया और उसका चेहरा देखते ही मैं सन्न रह गया। वह रॉबर्ट मास्टर की बेटी विनी थी। लोग उसे ललचाई नज़रों से देख रहे थे; हाथों में नोट निकालकर उसे अश्लील इशारों से अपने पास बुला रहे थे। वह नाचते-नाचते नोट दिखानेवाले के पास जाती और बड़ी अदा से मुस्कराकर रूपया ले लेती। नोट के आदान-प्रदान के दौरान दो हाथों के बीच जो एक लिज़लिजी-सी चीज़ थी, उसे देखकर मेरे अंदर से एक बहुत तिलमिला देनेवाली और बेसँभाल उबकाई उठी। मैं बार से फौरन बाहर निकला और भीतर का सारा कुछ सड़क पर उलीच दिया। उस उल्टी के तुरंत बाद मुझे यह समझ आ गया कि रॉबर्ट क्यों खुद को चैन से जीने नहीं दे रहा है।"

एक लंबी बातचीत के बाद जब हम कैफे से बाहर निकले, तब दिन करवट बदल रहा था। धूप की पारी समाप्त हो रही थी और भाम के लंबे साए सड़कों पर फैलते जा रहे थे। रॉबर्ट की याद बूढ़े की खुशमिज़ाजी पर फिर किसी काले

साए की तरह छा गई। वह चुपचाप चलता चला जा रहा था। कुछ देर बाद वह अपने-आपमें इतना खो गया कि उसे ध्यान न रहा कि मैं उसके साथ हूँ। चलते-चलते वह बीच-बीच में कुछ बड़बड़ा भी रहा था। उसकी बड़बड़ाहट मेरी समझ से बाहर थी। साफ जाहिर था- वह अपने प्रतिसंसार में चला गया था- एक दूसरी दुनिया में, जिसमें सिर्फ स्मृतियाँ और काल्पनिक यथार्थ होता है, वर्तमान की ठोस वास्तविकता से एकदम परे।

वह पोर्चुगीज़ चर्च की लंबी पटरी पर बहुत सुस्त कदमों से चल रहा था। मैंने उसे चुपचाप चलने दिया। उससे कोई संवाद करने के बजाय मैं केवल उसकी आकृति को निहारता रहा। उसकी स्वेड की शानदार भूरी पैंट, सफेद शर्ट और शर्ट के पीछे गेलिस की क्रॉस पट्टी, ब्लैक कैप और कैप के नीचे लहराते सफेद बाल, कंधे पर लटकता चमड़े का बैग और बैग से झाँकता सेक्सोफोन का गोल मुँह। उसकी आकृति आज एस्थैटिकली इतनी रिच थी कि बीते हुए कल की चिक्कट कंगाली का कहीं कोई अभास नहीं था।

वह पटरी पार करके बाईं तरफ मुड़ गया। थोड़ी दूर जाकर उसने फूलवाले की दुकान से फूल खरीदे और नज़दीक के एक बस-स्टॉप के क्यू में खड़ा हो गया। मैंने उससे यह पूछना ज़रूरी नहीं समझा कि वह कहाँ जाना चाहता है। मैं भी उसके पीछे क्यू में खड़ा हो गया। थोड़ी देर बाद एक बस आई और हम दोनों उसमें फुर्ती से चढ़ गए। तीन-चार स्टॉप के बाद हम एक उजाड़ इलाके में उतर गए। बस-स्टॉप के ठीक समाने एक सिमिट्री थी। व सिमिट्री के अंदर दाखिल हुआ और सीधे उस कब्र के सामने जाकर खड़ा हो गया, जिसके सफेद पत्थर पर काले अक्षरों से रॉबर्ट के जन्म और मृत्यु के बीच का अंतराल अंकित था।

उसने कंधे के बैग उतारकर ज़मीन पर रख दिया और फूल कब्र के पत्थर पर रख दिए। कुछ देर के मौन के बाद उसने अपने बैग से सेक्सोफोन निकाला और उसके बाद गिफ्ट पैकेट। जब उसने पैकेट पर रैपर खोला तो उसमें से

पीटर स्कॉट की बोतल निकली। वह बोतल उसने एक अर्से से सँभाल रखी होगी, किसी खास मौके के लिए। बोतल का ढक्कन जब वह खोल रहा था तब मैंने देखा, चेहरे पर वही कल वाली आक्रामक बेचैनी थी, बल्कि उसका चिकना और साफ-सुथरा चेहरा कल से भी ज्यादा घातक परिमाणों के पूर्व का संकेत दे रहा था। ढक्कन खोलने के बाद उसने शराब और सेक्सोफोन को आमने-साामने किया और पूरी बोतल सेक्सोफोन में उड़ैल दी। शराब सेक्सोफोन की पतली-दुबली रीप में से बहती हुई माउथपीस से बाहर निकली और पूरी कब्र कर फैली गई।

खाली करने के बाद उसने पूरी ताकत से बोतल सिमिट्री के एक कोने में उछाल दी। बोतल हवा में लहराती हुई सीधे एक कब्र से सलीब से टकराई और काँच के टूटने-बिखरने की आवाज़ ने सिमिट्री के सन्नाटे को झकझोर दिया।

फिर एक पल की खामोशी के बाद उसने अपने साज़ को ग़ौर से देखा। इस देखने में एक ऐसी चुनौती थी, जो किसी प्रतियोगी की आँखों में अंतिम राउँड के दौरान दिखाई देती है।

और अब उसने साज़ को होंठों से लगाया, तब पहली ही फूँक से जो आवाज़ निकली वह किसी भोंपू से निकली भोंडी भर्राहट से भी बदतर थी। बूढ़े ने गंदी गली बकते हुए साज़ को जोर से झटक दिया । अंदर बची हुई शराब की बूँदें बाहर छिटक गईं। उसने माउथपीस को रूमाल से रगड़कर साफ किया और एक लंबी फूँक लगाई, जो सेक्सोफोन की देह में अपना काम कर गई। उसने उस फूँक को सँभालकर सिमिट्री के सन्नाटे में आगे बढ़ाया और लय की एक लंबी रेखा खींची। पहले नीचे से हल्के और महीन, फिर ऊपर जाकर चौड़े और वज़नदार स्वरों का सीधा फैलाब, जिसमें सम से सम पर लौटने की आवृत्तिमूलक मजबूरी नहीं थी, कहीं पीछे लौटने की गुंजाइश नहीं थी - सिर्फ आगे और किसी अज्ञात अंत की तरफ बढ़ती अराजकता, न उसे कोई रोक सकता था, न थाम सकता था।

कुछ ही देर में मुझे मालूम हो गया कि वह बजा नहीं रहा है, बल्कि कब्रिस्तान में भटकती किसी लय या बीते दिनों की खून-खराबे से सनी यादों से अपने उत्तप्त और क्षुधित फेफड़ों को शांत कर रहा है।

मेरे लिए यह ज़रूरी था कि तुरंत उसे रोक दूँ, मगर वह धुन न तो मुझे सुनाने के लिए बजाई जा रही थी, न मैं उसका एकमात्र श्रोता था। मेरे अलावा वहाँ उस संगीत कान्फ्रेंस में कुछ कब्रें थीं, कुछ सलीबें थीं और कुछ उजड़े हुए बूढ़े दरख्त भी थे, जो उसके असली श्रोता थे।

कुछ देर बाद जब साए लंबाई की आखिरी हद तक पहुँच गए, प़रिंदे दरख्तों पर वापस लौट आए और अँधेरा आहिस्ता-आहिस्ता कायनात को घेरने लगा, तब अचानक बूढ़े ने सेक्सोफोन से मुँह हटा लिया। कुछ देर तक वहाँ सब-कुछ थम-सा गया, जैसे किसी छटपटाती हुई चीज़ ने अभी-अभी दम तोड़ा हो। बूढ़ा बहुत तेज़ी से हाँफ रहा था। उसकी नसें अभी तक तनी हुई थीं। वह बड़ी मुश्किल से चार-पाँच कदम आगे बढ़ा और एक पेड़ के तने से पीठ टिकाकर बैठा गया। मैं उसके नज़दीक गया तो उसने मुझे भी अपने पास बैठने का इशारा किया। मैं उसकी बगल में बैठ गया।

"यह एक बिटनिक धुन थी।" साँस सँभलने के बाद उसने कहा, "रॉबर्ट बिटनिक के खूँखार कारनामों का भक्त था।"

"और तुम?" मैंने पूछा, "तुम कौन-से पंथ के हिमायती हो?"

"मैंने जाज़ और इंडियन क्लासिकल के बीच का खाली रास्ता चुना था और आज भी उसी रास्ते पर चल रहा हूँ।

"यह रास्ता कहाँ जाकर खत्म होता है?"

"वहीं जहाँ से वह शुरू होता है।"

"यानी?"

"यानी सम से सम पर।"

"तुम्हें इसलिए ऐसा नहीं लगता क्योंकि मेरा साज़ सेक्सोफोन है और फेफड़ा ठेठ हिंदुस्तानी। मेरा साज़ जाज़ के भड़काऊ प्रभावों में आकर कभी-कभी बहक जाता है, पर मेरा फेफड़ा उसे पकड़कर फिर वापस कायदे पर ले आता है।"

"लेकिन अभी तुम जो बजा रहे थे, उसमें कहीं हिंदुस्तानी कायदे की पकड़ नहीं थी।"

"हाँ।" उसने स्वीकृति में सिर हिलाया। फिर किसी सोच में पड़ गया।

"क्या तुम्हें नहीं लगता कि तुम्हारी धुनें 'कायदे' से छुटकारा पाकर किसी ग़लत रास्ते में अटक गई हैं?"

उसने एक झटके से मेरी तरफ सिर घुमाया और कुछ आश्चर्य से मुझे देखने लगा। फिर नज़रे झुका लीं और बहुत संजीदगी के साथ कहा, "यह गड़बड़ी रॉबर्ट की मौत के बाद शुरू हुई... मैंने रेल की पटरी पर उसकी लाश देखी थी। उसके दोनों हाथ कट गए थे और एक हाथ को एक कुत्ता उठा ले गया था... उस दृश्य ने मेरी साँस को खरोंच डाला... मेरी फूँक में अब पहले जैसी सिफ़त नहीं रही।"

"सिफ़त है..." मैंने ज़ोर देकर कहा, "उतनी ही जितनी किसी कलाकार के भीतर होनी चाहिए। कोई भी हादसा कलाकार के अदंर की ख़लिश को खत्म नहीं कर सकता, अगर उसके अंदर ज़रा-सी भी ईमानदारी है।"

"ईमानदारी" उसने घूरकर मुझे देखा।

"हाँ, जब हम अपनी कमज़ोरियों का दोष समय पर मढ़ने लगते हैं, तब हम किसी और के साथ नहीं, खुद अपने साथ बेईमानी करते हैं।"

उसने गुस्से से फनफनाते हुए मेरा कॉलर पकड़ लिया। चेहरे से लगा कि अभी मुझे तमाचा जड़ देगा, मगर अगले ही पल उसका हाथ शिथिल हो गया, जैसे उसके भीतर से कुछ स्खलित हो गया हो, और उस स्खलन में सिर्फ तात्कालिक उत्तेजना का ही नहीं, बल्कि एक पूरी उम्र से अर्जित अकड़ का अंत था।

"मुझे अब साँस लेने में तकलीफ होती है।" उसने बहुत विवश निगाहों से मुझे देखा, "मैं जितनी तेज़ी से साँस छोड़ता हूँ, उतनी ही तेज़ी से साँस खींच नहीं पाता..."

"अगर तुम खींचते कम हो और छोड़ते ज्यादा हो तो खिंची हुई छोटी साँस एक लंबी फूँक के रूप में कैसे बाहर आती है?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"मुझे मालूम नहीं यह कैसे होता। सिर्फ यह महसूस होता है कि हर फूँक के साथ मेरे भीतर से कुछ गलकर बह रहा है।"

और तब पहली बार मझे उस पर दया आई। मैं देर तब उसका चेहरा देखता रहा। मुझे तुरंत समझ में आ गया कि उसके भीतर से गल-गलकर क़्या बह रहा है। मैंने उसके हाथ से सेक्सोफोन ले लिया - "कुछ दिनों तक इसे मत बजाओ। केवल लंबी साँसें लो। अपने-आपको पूरा समेटकर अपनी मैग्नेटिविटी को बढ़ाओ। फिर तुम देखना, सब-कुछ वापस भीतर आ जाएगा। जो कुछ गलकर बह गया है, वह रिकवर हो जाएगा। तुम कोशिश करो... मैं इस मामले में तुम्हारी मदद करूँगा।"

"मैं किसी भी तरह की मदद से बाहर हो गया हूँ और अब कुछ भी हासिल नहीं करना चाहता।"

"क्या?... क्या चाहते हो तुम?" उसका स्वर ज़रा ऊँचा हो गया।

"मैं देखना चाहता हूँ कि..."

"क्या देखना चाहते हो? यह कि मैं कैसे दम तोड़ता हूँ? कि कैसे मेरे मुँह से खून की उल्टी होती है।?"

"नहीं, मैं देखना चाहता हूँ कि तुम सेक्सोफोन बजा सकते हो कि नहीं। अभी तक तो वह तुम्हें बज़ा रहा था।"

उसकी भौंहें फिर तन गईं। चुनौतीपूर्ण आँखों से कुछ देर तक वह मुझे

देखता रहा, फिर मेरे चेहरे से नज़रें हटाकर सेक्सोफोन पर निगाह डाली। अपनी गोद में लेकर प्यार से उसे दुलराया, फिर वापस अपने बैग में रख दिया और उठ खड़ा हुआ। बैग को एक हाथ से कंधे पर लटकाने के बाद उसने हाथ मेरे कंधे में डाल दिया और हम दोनों सिमिट्री के बोसीदा अँधेरे से बाहर निकलकर शहर की जगमगाती रौनक में आ गए।

हम पटरी पर चल रहे थे। उसकी बाँह अब भी मेरे कंधे पर थी। मुझे उसके हाथ का दबाव पहले की तुलना में कुछ नर्म-सा लगा। उसकी चाल में भी अब पहले जैसी अकड़ नहीं, खम था।

"घर की तरफ लौटते हुए मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं अपने लक्ष्य की तरफ लौट रहा हूँ।" उसने बहुत धीमी आवाज़ में कहा।

"तुम्हारा लक्ष्य क्या है?" मुझे उम्मीद थी कि वह अपनी किसी बहुत गहरी महत्त्वाकांक्षा को उकेरेगा या बरसों से सोए हुए स्वप्न को जगाएगा।

मगर उसका जवाब बहुत संक्षिप्त था - "सेक्सोफोन बजाना।"

हालाँकि उसने यह बात बहुत सहज ढंग से कही थी, मगर उसमें एक छुपा हुआ अर्थ था। मैंने उस अर्थ की गंभीरता को बनाए रखा। रास्ते-भर मैंने उससे कोई बात नहीं की।

शहर की तमाम चीज़ें अब भी उतनी ही कठोर, निरूत्साही और अश्लील थीं, लेकिन अब किसी भी चीज़ से उलझने-टकराने या उसे तोड़-मरोड़ देने की उसके भीतर कोई तलब नहीं थी। उसकी इस गंभीरता से मैं ज़रा आश्वस्त हुआ। उससे विदाई लेते समय मुझे यह भरोसा था कि वह बिना किसी परेशानी के अपने घर पहुँच जाएगा।

(हंस, 1995)

मनोज रूपड़ा

अपने नये शिल्प के लिए जाना जाने वाले मनोज रूपड़ा का जन्म 16 दिसम्बर 1963 को खेतपुर, गुजरात में हुआ। मनोज निजी व्यवसाय करते हुए साथ-साथ साहित्य को साधने का काम करते रहे। प्रायः लम्बी कहानियां लिखीं और उनमें एक अलग तरह की भाषा, एक अलग तरह की शिल्प के साथ मजबूत विषय को पकड़ने की कोशिश की। 'दफन और अन्य कहानियां' तथा 'साज-नासाज़' दो कथा संग्रहों के अतिरिक्त एक उपन्यास 'प्रतिसंसार' प्रकाशित है।

सम्पर्क :- 'रब्न-नूर' लेन नं. -1, प्लाट नं. - 165,
क्रिश्चन कॉलोनी, मेकोसाबाग़, नागपुर, महाराष्ट्र
फोन - 0712-2767428